13774

ीमते रामानन्दाय नमः —*

बज्रांगदास प्रणीतेन

श्री राम रहस्य भाष्येण रहस्य प्रकाशिका

ना मानुवादेन चो प वृंहित्तम्

आर्षस्तवं श्रीराम स्तोत्रम्

—: प्रकाशक :—

श्रीरामभाउ–दाजी–सावंत

अम्बेडकर रोड़, बम्बई – १४

पुस्तक प्राप्ति स्थान भी यही है।

संवत २०१८, सन् १९६२ ई०

कीमत – १) रु०

हिन्दू इलैक्ट्रिक प्रेस, हरिद्वार में

ठा० हरिश्चन्द्रसिह प्रिन्टर द्वारा मुद्रित।

भेंट-समर्पण

श्री सद्गुरो !

मैं आपकी इस दया का कहां तक वर्णन करूं, क्योंकि आपने ही मुझे बलात संसार समुद्र से पार किया है। अन्यथा न जाने मेरी क्या दशा होती, न जाने मुझे किस किस दुर्योनि में जन्मना पड़ता। न जाने मुझे कौन से नरक में जाना पड़ता। आपके इस परम अनुग्रह से ही मैं शब्दमय राम की प्राप्ति कर सका हूँ। अर्थ मय राम भी अब दूर नहीं हैं यह सब आपका ही परम अनुग्रह इस दयनीय दास पर था।

आपके इस उपकार के बदले में अकिंचन मैं केवल वाणी से ही सेवा कर सकता हूं। उसी के परिणामस्वरूप यह श्रीराम रहस्य भाष्य रूप छोटा सा ग्रन्थ आप श्री के चरण-कमलों में भेंट समर्पण करता हूं। कृपया स्वीकार करेंगे।

आपकी चरण रज :—

पं० वज्रांगदास

॥ दानदाताओं का धन्यवाद ॥

१—श्रीमान् सेठ रामभाऊ जी दाजीना सावंत कपड़े के व्योपारी दादर बम्बई १४, पुस्तक प्रकाशन में बहुमूल्य योग।

२—श्रीमान् सेठ श्री वीर जी भाई कंट्राक्टर कराची वाला १००) रुपये

३—श्रीआर० डी० सावन २०)

४—श्री विमला विहारी शरण श्री अयोध्या वाले ११।)

५—गुप्तदानदाता १५) दानदेकर ज्ञान दान किया है। इस ज्ञान-पान से आप को भी यथार्थ तत्वज्ञान की प्राप्ति अवश्य होगी।

सभी दान वीरों का हार्दिक धन्यवाद है।

पं० वज्रांगदास

श्री परमानन्दाचार्य पीठ

प्राक्कथन

शास्त्रों में ज्ञान की बड़ी प्रशंसा लिखी हुई है, यहां तक कि इससे मुक्ति मिलने की बात भी की जाती है परन्तु ज्ञान मात्र से मुक्ति का मिलना तो दूर की बात है किन्तु लौकिक वस्तुओं के ज्ञान मात्र से उनका मिलना भी असम्भव ही होता है। जिस ज्ञान से मुक्ति मिलती है वह ज्ञान और ही है वह है विशेष ज्ञान अर्थात चाक्षुष ज्ञान। बात यह है कि ज्ञान दो प्रकार के होते हैं एक सामान्य ज्ञान और दूसरा विशेष ज्ञान। सामान्य ज्ञान बहुतों को रहता है विशेषज्ञान बिरलों को। ऐसी दशा में श्रीराम का सामान्य ज्ञान तो बहुतों को होगा किन्तु विशेष ज्ञान किसी किसी को, अर्थात श्रीराम भगवान हैं, अवतार हैं, यह तो सब कोई जानते हैं परन्तु वास्तव में राम कौन हैं यह कोई बिरला ही जानता होगा। यह इस लिये कहना पड़ता है कि श्रीराम को कहीं तो अवतार भी लिख दिया है और कहीं परब्रह्म। पर शब्द का अर्थ है सर्वापेक्षया श्रेष्ठ—सर्वापेक्षया श्रेष्ठ वही होता है जो सबका मूल होता है। ऐसे व्यामिश्र वाक्य—बर्हिष्मन्नेतदध्यात्मं पारोक्ष्यंहि प्रदर्शितम्। यत्परोक्ष प्रियो देवो भगवान्विश्वभावनः। इस बचन के अनुसार तथा परोक्ष प्रिय इवदेवाः इस तैत्तिरीय श्रुति के अनुसार ही लिखे गये हैं। शास्त्रों को क्या भगवान को भी यह भूल भुलैया ही पसन्द है। श्रीराम अपनी योग माया से तो वैसे ही ढके से ही हैं किन्तु शास्त्रों ने भी ऐसी बहुमुखी बातें कहकर पंडितों को, ज्ञानीओं को भी भुला रखा है। भूल—

भुलैया के चक्कर में डाल रखा है। इस लिये श्रीराम तत्व प्रायः छिपा हुआ ही है। स्वामी श्री १०८ श्री हरिदास जी ने श्रीराम तापिनी उपनिषद् पर भाष्य लिखकर श्रीराम तत्व को प्रकाश में रखा और यह राम भक्तों पर उन्होंने बड़ा ही उपकार किया किन्तु उन्होंने इस से कुछ भी लाभ नहीं ले पाया। यह उनके दुर्भाग्य की ही बात कही जा सकती है। यहां तक कि वह भाष्य भैंस के आगे वीणा बजाने को चरितार्थ कर रहा है। थोड़े दिनों के बाद वह अन्य शिरोमणि आदि रामानन्दीय ग्रन्थों के समान सदा के लिये जल समाधि ले सकता है। इस समाज में न ग्रन्थों का आदर है, न ग्रन्थों के तत्वों का ही। इसी कारण यह श्री रामानन्द संप्रदाय ग्रन्थ शून्य, अतएव प्रभाव शून्य हो कर तारों सा टिमटिमा रहा है जगत में। ऐसी दशा में ग्रन्थ लिखने ही व्यर्थ हैं किन्तु स्वभाव भी एक ऐसी वस्तु है कि वह किसी भी विरोधी की परवाह नहीं करता और अपना कार्य करने कराने को विवश कर देता है और फिर वह कार्य मनुष्य को करना ही पड़ता है। मुझे भी इसी विवशता के कारण छिपे हुए राम तत्व को प्रकाशित करना पड़ रहा है।

बात यह है कि श्रीमद् रामायण के लंका काण्ड के अन्त में ब्रह्मा और शिवादि द्वारा किया हुआ एक छोटा सा रामस्तोत्र है। उसमें सूत्र रूप से श्रीराम के छिपे हुए रूप का वास्तविक वर्णन है अर्थात श्रीराम कौन हैं ? क्या वस्तु हैं ? इस बात पर वहां अच्छा प्रकाश डाला है। परन्तु भूषणादि टीकाकारों ने उस स्तोत्र पर जो टीका किये हैं, उससे रामतत्व प्रकाशित नहीं हो पाया है। उनसे यह प्रतीत होता है कि यह स्तोत्र श्रीराम का नहीं अपितु श्रीमन् नारायण का ही है। किन्तु यह तो कपड़े के बाजार में लकड़े की सी बात हो जाती है। ऐसी टीकाओं से कोई भी विवेकी संतुष्ट नहीं हो सकता। तब रामनिष्ठा वाला तो

महर्षि वाल्मीकि शोध संस्थान
13774.
अयोध्या

कैसे संतुष्ट हो सकता है ? अतः इस रामस्तोत्र पर राम तत्व प्रकाश की परमआवश्यकता है। शताब्दियों से ऐसी टीका का अभाव श्रीरामानन्दीय समाज में विद्यमान है। इस अभाव के कारण रामभक्त तो अवश्य व्याकुल होता है, अतः इस अभाव को मिटाने के लिये बहुत वर्षों से चित्त में बहुत ही व्यग्रता और तड़फ थी, फिर भी श्रीराम की प्रेरणा के अभाव में, मैं इससे पूर्व इस पर टीका लिख नहीं सका। किन्तु गत सन् १९५४ ई० के प्रयाग कुंभ पर प्रकाशित "श्रीराम भगवान" नामक श्री भगवतदास जी के नोटस ने, जिसमें कि राम जी को पाताल में ढकेल दिया गया है, मेरी पूर्व की व्यग्रता में वृद्धि कर दी और मेरा विवेक खौलने लगा। इसी कारण सम्प्रदाय सेवा रूप यह छोटा सा 'राम रस भाष्य' समाज के सामने उपस्थित कर रहा हूं। श्रीराम में निष्ठा रखने वाले राम के प्यारे भक्तजन अवश्य ही इससे सन्तुष्ट होंगे। ऐसी मैं आशा करता हूं किन्तु दुःख इस बात का है कि समाज में राम निष्ठा का तथा राम निष्ठों का भी बहुत ही अभाव दिखाई दे रहा है। केवल स्वांग धारियों का तथा अनुत्तरदायी लोगों का जिन्हें सम्प्रदाय का ज्ञान नहीं और सम्प्रदाय के हानि लाभ का ज्ञान नहीं, जमघट मचा हुआ है। आराध्य की और आचार्य की यहां परवाह ही नहीं।

ऐसी दशा में यह भाष्य भी भैंस के आगे वीणा बजाने को चरितार्थ करेगा, किन्तु इसको एक भक्त भी ग्रहण कर लेगा तो भी मैं अपने परिश्रम को सफल समझूंगा।

— पं० बजरंगदास

श्रियःश्रियै नमः

श्री हनुमतेनमः

* श्रीमते रामानन्दाय नमः *

हेतुर्हि सृष्टि स्थिति संहृतीनाम्।
सेतुश्च यासंसृति वारिधेश्च ॥
केतुर्हि यावै प्रथिता सतीनाम्।
उदेतु सीता हृदिसेश्वरीमे ॥ १ ॥

पंजागुलं वा नयनाक्षरं वा वाचिस्थितं वा मनसिधृतं वा तथैव।
भुक्तिं च मुक्तिं ददातिसद्यो सीतापदं नौमिशिवादि सेव्यम् ॥ २
विश्वं भावयते तथैव भरते सांतंपुनः कुर्वते।
सर्वं भासयतेऽमयं विदधते सर्वं वशी कुर्वते।
बद्धं मोचयते सदा जन कृते लीला तनून्तन्वते।
सर्वैं श्वर्यवते स्वयं भगवते रामायतुभ्यं नमः। ३

श्रीराम तत्वाब्धिनिमज्जतां वैचाज्ञानिना मुद्धतये नरायणम्।
आर्षस्ननेहं हि मुनि प्रणीते गुरून्नमस्कृत्य करोमि भाष्यम ॥ ४
ततोह्दिदुर्मना रामः श्रुत्वैवं वदतांगिरः।
दध्यौमुहुर्तं धर्मात्मा वाष्प व्याकुल लोचनः ॥ १
ततो वै श्रवणो राजा यमश्चामित्रकर्षः।
सहस्राक्षो महेन्द्रश्च वरुणश्च परंतपः ॥ २
षडर्धनयनः श्रीमान्महादेवो वृषध्वजः।
कर्ता सर्वस्य लोकस्य ब्रह्मा ब्रह्म विदांवरः ॥ ३
एते सर्वे समागत्य विमानैः सूर्य सन्निभैः।
आगम्य नगरीं लेकामभिजग्मुश्च राघवम् ॥ ४
ततः सहस्ताभरणान् प्रगृह्य विपुलान्भुजान्।
अब्रुवं स्त्रि दशश्रेष्ठाः प्रांजलिं राघवं स्थितम् ॥ ५

राम रहस्य भाष्यम्

तत इति-ततस्तदनंतरं श्री सीताया अग्निप्रवेशानंतरं तस्यामग्निं विशंत्यांतु हाहेति विपुलः स्वनः। रक्षसां वानराणां च बभूवाद्भुतोपमइति वचनानुसारेण हाहेतिवदतां वानराणां रक्षसां च गिरः श्रुत्वा श्रीरामोपि दुःखितमना वाष्प लोचनश्च साश्रु लोचन श्च सन मुहुर्तं दध्यौ चिन्तयामास व्याकुल। एतस्मिन्नाभिमन्ये किंत्वयंमानुषाभिनयः गूढ रामतत्व प्रकाशनार्थं वैश्रवणः कुबेरो यमश्च सहस्राक्षो महेन्द्र श्च वरुणो यादसां पतिरित्यर्थः—त्रिलोचनो महादेवः सर्व लोक कर्ता ब्रह्मविदांवरो श्री राम दर्शिनां श्रेष्टो ब्रह्मा चैते सर्वे सूर्य सन्निभैर्विमानैः सार्धं स्वस्व विमानेष्यधिरुह्य लंकामागत्य च श्रीराम मभिजग्मुः, श्री राघवान्ति के सर्वेसमागताः ततस्तदनन्तरं सहाभरणहस्तान्सहाभरण भुजान्परस्परं संगृह्य प्रांजलिस्थितं राघवं ब्रुवंतिस्मस्तुवंति स्म। अत्र ब्रह्मादीनां श्रेष्टत्वं देवान्तरापेक्षया विज्ञेयं नतु रामापेक्षया। ब्रह्मादिभिरेव समागत देवागणा पेक्षया श्रीरामस्य श्रेष्टत्वाभिर्भिहितत्वात्। श्रीरामस्य प्राञ्जलित्वं तुसख्ये त्वेनैव वोध्यम्। श्री कृष्णावतारे ब्रह्मणः प्राञ्जलित्वं तुस्वापराधक्षमापनार्थम्। अपराधिन. प्रांञ्जलित्वं जगत्प्रसिद्धमेव।

रहस्य प्रकाशिका

श्रीराम के कहने पर जब श्री सीता भगवती अग्नि में कूद पड़ी तब वानर और राक्षसों ने हा-हा कार मचा दिया। इस हा–हा कार से श्रीराम भगवान के मन में बड़ा ही दुःख हुआ, और उनकी आंखों में आंसू भी भर आये और वह चिन्ता में मग्न हो गये। अर्थात् यह क्या हुआ यह सोचने लगे, इतने में ही वहां पर वैश्रवण कुम्वेर, वरुण, यम, इन्द्र, श्री शंकर और

श्री ब्रह्मा आदि देवता अपने अपने विमानों में बैठ बैठ कर आ गये। और वे एक दूसरे की बांहें पकड़े हुए, हाथ जोड़े खड़े हुये श्री राम भगवान से कहने लगे – अर्थात स्तुति करने लगे इसलिये कि यहां पर जो कुछ कहा गया है वह स्तुति ही है। अन्तमें भी इसे स्तुति ही कहा है। यहां पर जो ब्रह्मादि देवताओं को श्रेष्ठ कहा है सो देवान्तरों की अपेक्षा समझना चाहिये, श्री राम की अपेक्षा नहीं। क्योंकि आगे चलकर ब्रह्मा जी ने श्रीराम को देवगणों से भी श्रेष्ठ कहा है।

यदि श्रीराम इन ब्रह्मादिकों से श्रेष्ठ नहीं होते तो इन का श्रीराम की स्तुति करना ही असंगत ठहरता है। श्रीराम का हाथ जोड़कर खड़ा होना अपने मूल ब्रह्मत्व को छिपाने के लिये ही समझना चाहिये न कि वास्तविक। ब्रह्मादि को हाथ न जोड़ना या तो उनकी सख्य भावना है। अथवा काव्य की पद्धति भी मानी जा सकती है। श्रीकृष्णावतार में ब्रह्मा का हाथ जोड़ना अपराध के कारण ही समझना चाहिये क्योंकि अपराधी का हाथ जोड़ना जगत् प्रसिद्ध ही है। श्री ब्रह्मा जी कहते हैं कि—

कर्ता सर्वस्यलोकस्य श्रेष्ठो ज्ञानवतां वरः।
उपेक्षसे कथं सीतां पतन्तीं हव्यवाहने ॥ ६

श्रीराम रहस्य भाष्यम्

कर्तेति–हे राम ! सर्व लोकस्य दृश्या दृश्यस्य चतुर्दश लोकात्मकानेक ब्रह्माण्डस्य ब्रह्मांडाख्यानेक प्रजापतिनां च त्वमेव कर्तासि। एतेषा मुत्पत्तिस्थितिलयानां मूलभूतः कर्तात्वमेवासीति मात्रः ब्रह्मादयो वयंतु त्वदिच्छयै वोत्यादी कुर्मो नतु स्वेच्छया। प्रयोजक कर्ता त्वमेव वयंतु प्रयोज्य कर्ता इतिभावः।

ज्ञानवतां स्वतः सिद्धज्ञान वतां अस्मदादीनां मध्येऽपि त्वमेव वरोसि श्रेष्ठो सीत्यर्थः । त्वमेव सर्वज्ञोसीति भावः । इत्थं सर्वज्ञापि त्वं श्री सीतां शुद्धांजानन्नपि कथं तामुपेक्षसि । इदमुपर्युक्तं सर्वलोककर्ता त्वमेवे त्यादि कथनं कथिष्य माणं च वाक्यकदम्बं दशरथि मुद्दिश्यैव नतु श्रीमन्नारायण मुद्दिश्येति भाव ।

भाषानुबाद—

श्री ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे श्री राम ! आप ही इस दृश्यादृश्य चतुर्दश लोकात्मक अनेक ब्रह्माण्डों के कर्ता हैं । हम लोग तो आपकी इच्छा के आधीन होकर ही उत्पत्ति आदि करते हैं । अर्थात् आप प्रयोजक कर्ता हैं और हम लोग प्रयोज्य कर्ता हैं । इस प्रकार स्वतः सिद्ध ज्ञान वाले जो हम ब्रह्मादिक देवता हैं उन में भी आप श्रेष्ठातिश्रेष्ठ हैं । भाव यह कि यः सर्वज्ञः सर्ववित् इस श्रुति के अनुसार आप सामान्य ज्ञान तथा विशेष ज्ञान वालों में भी अति श्रेष्ठ हैं ।

इस प्रकार सर्वज्ञ हो कर भी अनजान के समान अग्नि में गिरती हुई भगवती श्री सीता का त्याग क्यों कर रहे हैं ।

कथं देवगणश्रेष्ठ मात्मानं नांव बुध्य से ।
ऋत धामा वसु पूर्वं वसूनां त्वं प्रजापतिः ॥ ७

रुद्राणामष्टमोरुद्रो साध्यानामपिपंचमः ।
त्वं त्रयाणां लोकानामादि कर्ता स्वयं प्रभुः ॥ ८

श्री राम रहस्य भाष्यम्

कथमिति–हे श्री राम ! उपस्थितिषु अस्मद्दादिषु सर्व देवेषु श्रेष्ठं मूर्धन्य भूतमात्मानं स्वं, कथं किमर्थं नाव बुद्ध से न जानासीत्यर्थः ।

त्वं तु वसूनामष्टानामपि यः ऋतधामानाम पूर्वोक्तसुः सत्व-मेवासि। यश्च पूर्वं प्रजापतिरासीत्सत्वमेवासि। एवं चैका दशानां रुद्राणांमध्ये योऽष्टमः रुद्रः श्रीशंकरः सत्वमेवासि। तथैवसाध्य-नां यः पंचमः साध्यः स त्वमेव त्वद्दशावतारा एव। एवमेकादशो-रुद्रोऽष्टमोवसुः पंचमः साध्यः प्रजापतिश्च सर्वे ऽपित्वदशाएव। त्वविभूतिरेवत्रयाणां लोकानामित्कनेक ब्रह्माण्डोपलक्षणं तेनानेक ब्रह्माण्डानामादिर्यः श्रीमन्नारायणो विष्णुर्वातयोः कर्ता तद्रूप-धारणकर्ता त्वमेव। एतयोरपित्वमेवादिभूतइतिभावः।

प्रमाणमप्यत्र विद्यते-तथाहि-ततस्त्वमसिदुर्धर्षस्तस्माद्भावा-त्सनातनात्। रक्षां विधास्यन्भूतानां विष्णुत्वमुपजग्मिवा-नित्युतर काण्डस्थ कालवचनमेव। तेन श्रीमद्विष्णुः श्रीरामस्या-वतार एव। एवमेव श्रीमन्नारायणोपि श्रीमद्रामचन्द्रस्यावतारएव इत्यत्रापिप्रमाणमस्ति। तथाहि-एषोह्यशेषसत्वानामात्मांशः पर-मात्मनः। आद्यावतारो यत्रायं भूतग्रामोविभाव्यते - इति श्रीमद्भागवत वचनमेवतेन श्रीमन्नारायणोपिपरमात्मनः श्रीराम-स्याद्यावतारएव। सकल जीवानामात्मत्वेन भूतग्रामस्यावस्थानत्वे-नायमाद्यावतारः श्रीमन्नारायणएवनान्यः। द्वयोरपिविशेषणयो रन्यत्रब्रह्मादिष्वदर्शनात्। एवं च नारायणाद्भिन्नस्य कस्यचित्प-रमात्मनों शत्वमपिस्पष्टमेवात्र श्रीमन्नारायणे। तथैव नारायणा-द्भिन्नं परमात्मत्वंपि श्रीरामे प्रसिद्धमेव। तथाहि-मयारामस्य राजर्षे भार्ययापरमात्मन इति श्रीमद्रामायण वचनमेवा श्रीराम मूल तथा रामत्वंपरमात्मासीतिमुक्तकोपनिषद्वचनमपि परमा-त्मैव। एतावतारित्वं श्रीमद्रामस्यैवा वगन्पते अंशत्वादाद्यावतार त्वादवतारित्वं श्रीमन्नारायण स्यैवावगम्पते। तेन श्रीमन्नारायणो विष्णुर्वा श्रीरामस्यावतारभूतावेव नात्र संशयलेशोनाथत्रदुराग्रहः कश्चित्।

यद्यपि-एतन्नानावतराणां निधानं बीजमव्ययमिति श्रीमद्भगवत

वचनानुसारेण श्रीमन्नारायण एव नानावताराणां बीजं कारणं, तथैव स एव निधानं लयस्थानमपि। तथापि पुराणेतिहासयोर्मध्ये इतिहास एव बलवानिति न्यायेन त्वं त्रयाणां लोकानामादिकर्ता स्वयं प्रभुरिति श्रीमद्रामायण वचनस्यैव बलीयस्त्वेन राम एव आदेः श्रीमन्नारायणस्य कर्ता रूपधर्ता इत्थं च रामं वर्जयित्वान्येषां नानावताराणां बीज (कारण) मपि तथैव निधान (लयस्थान) मपीति न विरोधः। ननु परव्यूह विभवान्तर्याम्यर्चावतारान्तः पातित्वेन श्रीरामस्य विभवावतारेषु परिगणनाच्छ्री रामोप्यवतार एवेतिच्चेन्न। परात्परं राममहं भजामीति सनत्कुमार संहिता वचनाद्राम सम्बन्धिविभवातार त्वं बाधितमेव तेन श्री रामो न विभवावतारः किंतु पराच्छ्रीमन्नारायणच्छ्रीमद्विष्णोरपि परं (मूलं) ब्रह्मवै। तेन स न द्वादशकलोन चतुर्दशकलः किंतु सर्वासां कलानामीश एव प्रमाणमप्यत्र। तथाहि-अस्मत्प्रसाद सुमुखः कलयाकलेश-इक्ष्वाकुवंश अवतीर्यगुरोर्निदेशे। तिष्ठान्वने सदयितानुजश्चाविवेश यस्मिन्विरुद्ध दशकंधरमार्तिं मार्च्छत् इति श्रीमद्भागवतोक्त्या स सर्वासां कलानामीश एव। अतश्चोपकल्पितं श्रीराम संबंधि द्वादशकलत्वं चतुर्दश कलत्वं बधितमेव। एवं च चतुर्दशकलत्वपरा भविष्योक्तिरर्थान्तर परत्वेन नेतव्या। तेन साचतुर्दश विद्यापरासती तत्संख्याक विद्यायुक्तस्य श्रीरामस्य श्री रामानन्दस्वामि हृदयप्रवेशं निर्दिशति नतुषोडश भागपराभि श्चतुर्दश कलाभियुक्तस्य श्रीरामस्य, तस्यापरिमेयत्वात्। अन्यथा पूर्वप्रदर्शि श्रीमद्रामायण वचनानां श्रीमद्भागवत वचनानां सर्वेषामपिनिसंवादित्वापतेर्मिथ्या वादित्वापत्तेश्च।

श्रीरामस्य मूलब्रह्मत्वं स्पष्टयति स्वयं प्रभुरित्यादिना त्वमेव स्वयं प्रभुरसि-स्वयमेव यः प्रभुः स स्वयं प्रभुः। श्रीरामः न कस्यापि विष्णोः श्रीमन्नारायणस्यैवावतारः किंतुस्वस्यैवावतार इत्यत्र-

यो ऽसावतीन्द्रियग्राह्यः सूक्ष्मोऽव्यक्तः सनातनः। सर्वभूतमयोऽचिन्त्यः सएव स्वयमुद्बभा विति मनु वचनंप्रमाणम्। तेन श्रीरामः स्वयं प्रभुः मूलंब्रह्म वेतिभावः। एतावतापुराण प्रतिपादिता नामन्येषां स्वयंभगवत्वं बाधितमेव।

अश्विनौ चापिकर्णौ ते चन्द्र सूर्यौ च चक्षुषी।
अन्ते चादौ चलोकानां दृश्यसे त्वपरं तप ॥ ९

श्री राम रहस्य भाष्यम्

अश्विनाविति—इदानीं श्रीरामस्य सर्वलोक कर्तृत्व सामर्थ्यं दर्शनायाति संक्षेपतोत्र पुरुष सूक्तार्थं प्रतिपादयति। तथाहि हे परंतप! अश्विनौ तेतवकर्णौ कर्णस्थानीयौ श्रवणेद्रियौ स्तः श्रवणेन्द्रियाभ्यां जाताविति भावः। एवंच चन्द्रसूर्यौ च तेतव चक्षुषीस्तः चक्षुर्भ्यांजाताविस्यर्थः।

इत्थमनुक्तं सर्वमपि पुरुष सूक्तार्थं श्रीरामेगतार्थमितिबोध्यं तत्वान्वेषिभिः। ननु चन्द्र सूर्ययोरत्र चक्षुष्ट्वेन रूपेणवर्णितत्वा श्रक्षुरूपवाक्यार्थं विहाय कथं जात्यर्थ उच्यते इति न शंकितव्यं। पुरुषसूक्तेपि ब्राह्मणोस्य मुखमासीदित्यत्र ब्राह्मणस्य मुखरूपत्वेन वर्णितेपि मंत्रान्तिमपादान्तर्गत जनिधातोः प्रयोग दर्शनेन तत्र-मन्त्रस्य प्रथमपादेपि ब्राह्मणस्य पुरुषमुखा दुत्पत्तिरूपजात्यर्थग्रहण इवात्रापि श्रीरामनेत्राभ्यां चन्द्र सूर्ययोरुत्पित्तिरूप जात्यर्थ स्यैवो चितत्वात्। इत्थमतिसंक्षेपेण पुरुषसूक्तार्थं श्रीरामे दर्शयित्वा सृष्टे राद्यंतयोः श्रीरामस्यैवा वशिष्टत्वं दर्शयति-अन्त इति—हे श्रीराम! लोकानां चतुर्दश भुवनात्मकानेक ब्रह्माण्डानामुत्पतेः प्रागपि त्वमेवासीः। तथैवैतेषां विनाशानंतरमपित्वमेवा वशिष्टो दृश्यसे सूरिभिस्त्वद्भक्तैरथर्ववेदोक्त श्रीमदयोध्यावासि भिरितिभाव

रहस्य प्रकाशिका

श्री ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे परमतप! दोनों आश्विनी कुमार तुम्हारे कर्ण हैं अर्थात तुम्हारे कानों से उत्पन्न हुये हैं। और ये जगत्प्रकाशक चन्द्र सूर्य आपके नेत्र हैं अर्थात आपके नेत्रों से उत्पन्न हुये हैं। इस प्रकार अति संक्षेप से पुरुष सूक्त के अर्थ में श्रीराम को दिखाया है, ब्रह्माजी ने। इस अर्थ को वास्तविक रूप से श्रीराम में ही दृढ़ रूप से जानने और मानने के लिए श्री ब्रह्मा जी फिर कहते हैं कि हे परमतप! इन अनेक ब्रह्माण्डों के उत्पत्ति से पूर्व भी आप ही थे और इन के विनाश के पश्चात भी अथर्ववेदोक्त श्रीमदयोध्या के निवासी सूरि (नित्य मुक्त तथा भक्ति द्वारा मुक्त) लोको के द्वारा आप ही देखने में आते हैं।

उपेक्षसे कथंसीतां मानुषः प्राकृतोयथा।
इत्युक्तो लोकपालै स्तै स्वामी लोकस्य राघवः ॥ १०

अब्रवीन्त्रदशश्रे ष्ठान् रामोधर्मभृतां वरः।
आत्मानं मानुषंमन्ये रामं दशरथात्मजम्।
योऽहं यस्य यतश्चाहं भवांस्तद्ब्रवीतमे ॥ ११

श्रीराम रहस्य भाष्यम्

उपेक्षस इति–हे परंतप! प्राकृतो धर्म ज्ञानशून्यः सद सद्विवेक शून्यः मनुष्यो यथा स्वपत्नी वृत्तमजानन्सन् परप्रेरणात्तां दुष्टां मत्वोपक्षते–तथैव त्वंमखिल ब्रह्माण्डानामादिर्यः श्रीमन्नारायणो विष्णुर्वा तस्यापिकर्ता सर्वज्ञः परमेश्वरोपिसन् प्रत्यक्ष ज्ञान वन्ह्वी हनुमत्कथानाश्च श्री सीतां शुद्धां जानन्नपितांकथं केन प्रमाण–धारेणोपेक्षसेत्यक्तुमुत्सहसेतद्वद्। इति– एवं प्रकारेण लोकपालै

स्तैर्ब्रह्मादिभिरुक्तो लोकस्य सर्वलोकस्य स्वामी नियमनकर्ता धर्म भृतां सकल धर्म धुरंधराणांवरः श्रेष्ठः श्रीराम स्तांस्त्रि दशश्रेष्ठान ब्रह्मादीनब्रवीत्। तथाहि भो देवाः। अहंत्वात्मानं स्वं दशरथ महाराजस्य पुत्रं राम नामकं मानुषं मन्येनतुभवदुक्त रीत्या स्वयं प्रभ्वादिकम्। एवं च यथा मानुषैरापत्कालमाश्रित्यानुन्वितकार्य मपि क्रियते तन्मयापि क्रियते। यच्चापि मुनयोमां रामं धर्मभृतां धर्मधुरंधराणांमध्ये वरमाहुस्तथापिमानुषत्वेन विवशत्वाद्यत्सर्वैर्‌-रपि क्रियते तन्मयापिक्रियते। सर्वोपि विवशत्वादनुचितमपि कर्तुं बाध्यएवातस्तत्कर्तुं सर्वोप्युद्यतो दृश्यते। अतोहं स्वरूपेण तत्वतोयोऽस्मि यस्यचापेक्षया परोस्मि यतश्चकारणानस्माल्लोकद्वा हमागतोऽस्मि-तत्सर्वं मद्विषयकं ज्ञातव्यतत्वं भावि सर्वलोक ज्ञानाय भवंत एवब्रुवंतु। एवं स्वमुखात्स्व परत्व वर्णनापेक्षया परमुखात्तद्वर्णन श्रेष्ठामतिशिष्टाचार स्तेन सर्वापेक्षया स्वपरत्वं जानन्नपि वास्तिवकं तत्स्वपरत्वं ब्रह्ममुखाच्छ्रोतुं पुनः प्रेरितो ब्रह्मा श्रीरामेण।

रहस्य प्रकाशिका

ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे परंतप ! जैसे धर्म ज्ञान शून्य सद सद्विवेक शून्य मनुष्य, अपनी पत्नी के चरित्र को न जानने के कारण दूसरों के उसकाने मात्र से उसे दुष्टा समझ कर त्यागने लगता है इसी प्रकार आप सर्व लोकों के आदि श्रीमन्नारायण वा विष्णु के भी कर्ता होकर अर्थात उनके भी मूल भूत कारण होकर सर्वज्ञ परमेश्वर होकर भी तथा श्री हनुमान जी के मुख से श्री सीता भगवती को शुद्ध और निदुष्टा सुन कर भी उन्हें त्याग रहे हैं किस प्रमाण के आधार पर यह कहिये। इस प्रकार ब्रह्मादिलोकथालोके कथन को सुनकर सर्वलोकों के स्वामी और सब धर्मधुरंधरों में श्रेष्ठ श्रीराम भगवान उनसे कहने लगे कि

हे देवताओ ! मैं राम अपने आपको दशरथ महाराज का बेटा मानता हूँ अत; अपने आपको मैं मनुष्य ही मानता हूं

मनुष्य सदा परवश होता हैं इस लिये वह आपत्काल में अनुचित और अकर्तव्य कर्म कर ही बैठता है। इस लिये मैं भी ऐसा कर्तव्यकर्म करने को बाध्य हो गया हूँ। परन्तु वास्तव में मैं जो हूँ और जिसकी अपेक्षा मैं श्रेष्ट हूं और जिस कारण से और जिस लोक से मैं आया हूं उन सभी बातों को जो मेरे से सम्बन्ध रखती हैं भाविलोकों की जानकारी के लिए आप लोग ही कहें कि मैं अमुक हूँ।

इति ब्रुवन्त काकुत्स्थं ब्रह्मा ब्रह्मविदावरः ।
अब्रवीच्छृणुमे राम सत्यं सत्य पराक्रम ॥ १२

रहस्य भाष्यम्

इतीति-इत्युपर्युक्त प्रकारेण भाषमाणं काकुत्स्थं ककुत्स्थस्य राजर्षेः गोत्रापत्यं श्री रामं ब्रह्मविदां ब्रह्म ज्ञानां मध्ये वरः श्रेष्ठो ब्रह्मा अब्रवीत्कथयामासेत्यर्थः। तथाहि ब्रह्मा कथयति हे राम ! हे सत्य पराक्रम ! त्वं वस्तुतो यदसि, यदपेक्षया च श्रेष्ठोऽसीति, यस्मा त्कारणाद्यस्माल्लोकाद्वा समागतोसीतित्वद्विषयकं यत्सत्यमस्ति तत्सर्वं मत्सकाशान्मन्मुखात्वंश्रृणु। अयंभावः यद्यपि प्रसिद्धौ एतस्य ब्रह्मणोनामसत्यमितिश्रुत्वा रामाद्भिन्नस्य कस्य चिद्ब्रह्मण एवनाम सत्यं, तेन सत्य पराक्रम इत्यपिनाम रामा द्भिन्नस्यब्रह्मण एवनतुरामस्य। तथाप्येतन्मतं स्वचक्षुषा ब्रह्मदर्शनमकुर्वतामेव नतु प्रत्क्षतेः सहस्रकृत्वो ब्रह्मदर्शनं कृतवतां ब्रह्मादीनाम्। एत्ते त, प्रत्यक्षतो पूर्वमपि मूल ब्रह्मत्वेनरूपेण श्रीरामं दृष्टवंतः। इदानीमपि ब्रह्मत्वेनरूपेण राममेवप्रश्यंति। येन ब्रह्मरूपेण पूर्वं श्रीरामं दृष्टवंत एते, तेनैव ब्रह्मरूपेणेदानीमपि श्रीरामं पश्यंति-अथवा येन राम

रूपेणपूर्वं ब्रह्मदृष्टवंत एते तेनैव रामरूपेणे दानीमपिब्रह्म दृष्टवंतः। अतो मूल ब्रह्मतोभिन्नोन श्रीरामेन श्रीरामतो भिन्नं ब्रह्म अतः श्रीराम एव परंब्रह्म राम एव सत्यपराक्रमोपि। एवंच ब्रह्मरामयेः स्वरूपतः स्वभावतो गुणकर्मतश्शक्तितश्चैक्यमेव तेन सत्यकाम सत्य संकल्पवत्वादीनामप्यत्र संग्रहः कर्तव्यः इत्थंच-रामः सत्पुरुषो लोके सत्यः सत्य पराक्रम इति श्रीमद्रामायणोक्तिरपि संगतैव। श्रीरामस्य सत्य संकल्प वत्वंतु श्रीमल्लक्ष्मण विनाशाय रावण प्रहृताया अमोघ शक्त्या मोघीकरणं, तच्च तत्र युद्ध प्रकरणे द्रष्टव्यम। यस्येतिषष्ठीतेनेदानीम पेक्षाकृत परत्वं सूचयति-

रहस्य प्रकाशिका

उपर्युक्त रीति से श्रीराम के कहने पर ब्रह्म दर्शन करने वालों में श्रेष्ठ श्री ब्रह्मा जी श्रीराम भगवान से कहने लगे कि हे श्री राम! हे सत्य पराक्रम! आप वास्तव में जो हैं और जिसकी अपेक्षा आप पर है अर्थात श्रेष्ठ हैं। तथा जिस कारण से और जिस लोक से आप आये हैं इत्यादि आप के सम्बन्ध में जो जो सत्य बातें हैं वे सब आप मुझ से सुनें। सत्य पराक्रम कहने का ब्रह्मा का अभिप्राय यह कि यद्यपि उपनिषदों में ब्रह्मणो नाम सत्यं इस श्रुति के अनुसार अभियुक्त के मत में राम से भिन्न किसी ब्रह्म का ही नाम सत्य है और सत्य पराक्रम भी यह ठीक है। तथापि यह मत प्रत्यक्ष दर्शन कर सकने वालों का ही हो सकता है न कि हजारों बार अपनी आंखों से प्रत्यक्ष दर्शन करने वाले इन ब्रह्मादिकों का। इन लोगों ने तो पहले भी मूल ब्रह्म रूप में श्रीराम भगवान को देखा और इस समय भी मूल ब्रह्म रूप में श्रीराम को ही देख रहे हैं। भाव यह कि जिस मूल ब्रह्म रूप में श्रीराम भगवान को पहले इन्होंने देखा था इस समय भी उन्हें इसी मूल ब्रह्म के रूप में ये ब्रह्मादिक देख

रहे हैं। अथवा यों भी कह सकते हैं जिस राम रूप में पहले इन लोकों ने मूल ब्रह्म को देखा था उसी राम रूप में इस समय भी वे मूल ब्रह्म को देख रहे हैं। इस लिये यही ठीक है कि मूल ब्रह्म से न तो श्रीराम भगवान भिन्न हैं और न श्रीराम भगवान से मूल ब्रह्म ही भिन्न है। इस लिये ये श्रीराम परंब्रह्म अर्थात मूल ब्रह्म हैं और राम ही सत्य पराक्रम और सत्य भी हैं। इसी बात का रामः सत्पुरुषोलोके सत्यः सत्यपराक्रमः इस बचन के अनुसार श्रीमद्रामायण भी समर्थन करता है।

श्री राम का सत्य संकल्प व त्व तो श्री लक्ष्मण जी के नाश के लिये प्रहृत अमोघ शक्ति का मोघी करण श्रीमद्रामायण में प्रसिद्ध ही है वहां ही देखना चाहिए।

भवान्नारायणो देवः श्रीमांश्चक्रायुधो विभुः।
एक शृंगो वराहस्त्वं भूत भव्यः सपत्नजित्॥ १४

राम रहस्य भाष्यम्

भवानिति—हे सत्य पराक्रम! भवानेव चक्रा युधादिविशेषण विशिष्टः श्रीमन्नारायणोऽस्ति। भवत एव श्रीमन्नारायणोऽवतारोस्तीतिभावः। स्थानान्तरितत्वेसति रूपान्तरित त्वस्यावतार लक्षणस्य श्रीमन्नारायणे चरितार्थता च कथमिति चेच्छृणु-तथाहि-आपोनाराइतिप्रोक्ता आपोवैनरसूनवः। ता एव ह्ययनं यस्मात्तस्मान्नारायणस्मृत इतिमनूक्त निर्वचनान्तः पातिनर वाच्यस्या ज्ञातविषय त्वात्तद् ज्ञानाय- महर्षे त्वं समर्थोसिज्ञातु मेवं विधंनरमिति श्रीमद्वाल्मीकि मुनिप्रश्नस्य-मुनेवक्ष्याम्यहं बुद्धा तैर्युक्तः श्रूय नर इति देवर्षि श्रीमन्नारदोतरमेवशरणम्। तेन नर शब्द वाच्यः श्रीराम एव। अपएव स सर्जोदावितिवचनानु सारेण राम सृष्टा एवायः। तासु द्विभुजत्वं विहाय चतुर्भुजत्वेन

रूपान्तरेण शयनान्नरस्य श्रीरामस्यैव श्रीमन्नारायण ज्ञातेन स रामस्यावतार । एवं च द्विभुजवत्वं चतुर्भुजवत्वं रामनारायणयोः रूपेणान्तरम् । तथैव परव्योम्नि भूलोके च संस्थिताथर्व वेदपठिता श्रीमदयोध्या अथ च भूलोकस्थं क्षीरार्णवमितिक्रमाद्रामनारायण योः स्थानेनान्तरम् । इत्थं चवातार लक्षणं श्रीमन्नारायणे चरितार्थमेव । एषोह्यशेषसत्वानामात्मांशः परमात्मनः । आद्या वतारो यत्रायं भूतग्रामो विभाव्यते इति श्रीमद्भागवतोक्त्यापि श्रीमन्नारायणस्याद्यावतार त्वं सिद्धत्येव । अत्र वचने श्रीमन्ना- रायणस्य परमात्मांशत्वमेव विहितम् । राम त्वं परमात्मासीति मुक्ति कोष्ठनिषदि तथैव-मयारामस्य राजर्षेभार्यया परमात्मन इति श्रीमद्रामायणे च श्रीरामस्य परमात्मत्वं च प्रसिद्धमेव । तेन श्रीमन्नारायणस्य श्रीमद्रामावतारत्वमेव निश्चितम् । ननु नरतीतिनरः प्रोक्तः परमात्मा सनातन इति रामाद्भिन्न स्यैव परमात्मत्वेन कथनात्कथम परमात्मनः श्रीरामस्य श्रीमन्नारायणो ऽवतार उच्यत इतिचेन्न । श्रीमद्रामायणोक्त्योपनिषदुक्त्या च तस्य परमात्मत्वेनिर्णीते श्रीमद्भागवतोक्त्या श्रीमन्नारायणस्य परमात्मत्वां सचाद्यावतारत्वेच निर्णीते श्रीमन्नारायणस्य रामावतारत्वे संशयाभावात् । न चैवं- एतन्नानावताराणां निधानं बीजमव्ययमिति श्रीमद्भगवतोक्त्या सर्वावताराणां बीजत्वं (कारण त्वं) निधानत्वं (लयस्थानत्वं) च श्रीमन्नारायणस्य व्यर्थ मिति वाच्यं । श्रीरामं विहायतदितरेषां सर्वेषामेवनानावताराणां बीजत्व निधानत्वाभ्यां तदुक्तेश्चरितार्थत्वात् ।

यद्यपि- एकोहवै नारायण आसीन्नब्रह्मा न च शंकर इति श्रुत्या कंठतः श्रीमन्नारायणस्यैव सर्व पूर्वत्वं संप्रोक्त मतः कथमपि श्रीमन्नारायणः श्रीमद्दाशरथेरवतारो भवितु नार्हति । तथापि ब्रह्मशिवाद्यपेक्षया श्रीमन्नारायणस्य पूर्वत्व कथनपरायाः पूर्वोक्तश्रुतेश्चरितार्थत्वेन यथार्थत्वेन तस्य ताभ्यां पूर्वत्वे स सिद्धेपि

मनूक्त्या श्रीमन्नारायणापेक्षया नर वाच्यस्य श्रीमद्रामस्यैव पूर्वत्वं सिद्ध्यति तेन नारायणस्य पूर्वत्वं बाधितमेव। एवमेव चावतार गणनायां श्रीरामस्यनिवेशस्तु तस्य सर्वमूलत्वाच्छादनार्थमेवासुरजनविमोहनार्थ मेव। विभावतारेषु परिगणनमपि तदर्थमेव तेन रामो न विभवः किन्तु परात्परं राममहं भजामीति सनत्कुमार संहिता वचनात् पराच्छा मन्नारायणाद पिपरः श्री राममहं भजामीत्यर्थः। सनत्कुमार संहितावचनं पुराण वचनापेक्षया बलवत्तरयेव सनत्कुमारस्य व्यासदेवसद्गुरुत्वात्। तथैव हे राम! भवानेव-एकोदेवः सर्वभूतेषु गूढस्तथा द्यावाभूमिं जनयन्देव एक इत्यादि श्रुत्युद्घोषितोदेवोऽस्ति। कथमिति-वेदुच्यते तथाहि क्रीडार्थ पराभ्यां दिवुरमुधातुभ्यां निष्पन्नौ देव राम शब्दौ समानार्थकावत एव पर्यायावेव। तेनात्र श्रुतौदेव शब्दो रामपरः। अत एको राम एव सर्वभूतेषु सर्वात्मत्वे न गूढोऽनाहिंतस्तथैव द्यावाभूमेर्जनयिताप्येको राम एव नान्यइति श्रुत्यभिप्रायः

तथैव हे राम! भवानेव विभुर्व्यापकोस्ति सर्वत्र। उक्तं च स्कान्दमहापुराणे रामोह्ययं विश्वमिदं समग्रं स्वतेजसा व्याप्य जनान्तरात्या। पुनातिजन्मान्तराणि पातकानि स्थूलानिसूक्ष्माणी क्षणा ह्रदग्ध्वा-इति स्कान्द वचनादपि श्रीरामोविभुर्वे विशेषरीत्या भवतीति विभुर्व्यापक इत्यर्थः।

सुतरां श्रीमन्नारायणः श्री रामस्यावतार एव।

अतएवात्र - भवान्नारायणोदेव इति ब्रह्मोक्तिरपि श्रीराममेव श्रीमन्नारायणस्य मूलं घोषयति। अन्यथा-एक पूरङ्गोदराहस्त्व मित्युक्त्यापि श्रीवराहोपि रामस्य मूलंस्यातेन न श्रीमन्नारायणस्य श्रीराममूलकता स्वत एव व्याहृता स्यात्तदनिष्टमेव। सर्व शास्त्र विरोधश्चापरिहार्य एव। एवं रामस्य परत्वप्रसंगेऽपरत्वप्रसंगापति स्तुति प्रसंगे निन्दा प्रसंगापत्तिश्च। अतोत्र श्रीमन्नारायणः श्री रामस्यावतार इतिध्वनितं ब्रह्मणा। नारायणनिरुक्तौचनर शब्दोपि

रामाभिप्रायेणप्रोक्तोमनुनेतिरहस्यम् ।

एवमेव एकश्रृङ्गाः पृथ्व्युद्धर्ता वराहोपि त्वमेव त्वदवतार एव । एवमेवान्येपि सपत्नानांजयाय भूताभव्याश्चयेऽवतारासोसर्वेपित्व-वातारा: अतः सपत्नाजित्वमेवासीत्थं सर्वेषामवताराणां त्वमेव मूलकन्दोसीत्यर्थ ।

रहस्य प्रकाशिका

श्री ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे श्री राम ! आप ही चक्रायुधादि विशेष विशिष्ट श्रीमन्नारायण भगवान् हैं । अर्थात वह चक्रादि आयुद्धधारी श्रीमन्नारायण आप ही का अवतार है । यहां पर यह भी शंका की जा सकती है कि जब श्री राम के हाथ में न तो चक्र है न शंख ही है तब वह कैसे नारायण हो सकते हैं । इस लिये इसवाक्य का लाक्षणिक अर्थ करना चाहिए । वह यह कि आप ही के अवतार श्रीमन्नारायण हैं । अब जिस प्रकार से श्रीमन्नारायण भगवान श्री राम के अवतार हैं वह प्रकार कहते हैं । वह प्रकार यह कि आपोनाराइतिप्रोक्ता आपो वैनरसूनवः । ता एव ह्ययनं यस्यातस्यान्नारायण इतिस्मृत इति मनुस्मृत्युक्त श्रीमन्नारायण निर्वचन के अंदरजोनर वाच्य हैं वह तो अज्ञात ही है । उसे जानने के लिये–महर्षे त्वं समर्थोसिज्ञातुमेवं विधं नरम् । इस श्रीमद्वाल्मीकिमुनि के प्रश्न के उत्तर में–मुनेवक्ष्याम्यहं बुद्धातैर्युक्तः श्रूयतां नरः यह श्रीमन्नारद जी का उत्तर ही शरण हो सकता है । इस उत्तर में श्री नारद जी ने श्री राम को ही नर कहा है । इस लिये इस बचन में जो नर है वह श्रीराम ही है यही समझना चाहिये । और श्री राम का जल निवास होने से स्थानान्तर ण होने के कारण और द्विभुज से चतुर्भुज होने से रूपान्तर होने के भी कारण क्षीरार्णव में रहने वाले चतुर्भुज

श्रीमन्नारायण भगवान श्रीराम के अवतार ही ठहरते हैं। और इस मेरे अर्थ का श्रीमद्भागवत भी-एषो ह्यशेष सत्वानामात्मांशः परमात्मनः। आद्योऽवतारो यत्रार्थं भूतग्रामो विभाव्यते। इस बचन के अनुसार समर्थन ही करता है। इस लिये कि इस बचन में श्रीमन्नारायण को परमात्मा का अंश और आद्य नाम पहला अवतार कहा है। और - मया रामस्य राजर्षे आर्याय परमात्मनः श्रीमद्रामायण के इस बचन में श्री राम को कंठ से परमात्मा कहा है। इस प्रकार श्रीमन्नारायण को अंश मानने से और आद्यावतार मानने से तथा श्रीराम को परमात्मा मानने से श्रीमन्नारायण भगवान श्रीराम के सर्व प्रथम अवतार ही सिद्ध होते हैं। भाव यह कि स्थानान्तरितत्वेसति रूपान्तरितत्वं यह अवतार का लक्षण श्रीमन्नारायण में चरितार्थ ही है। अतः वह श्री राम के परमात्मा के अवतार ही ठहरते हैं। परन्तु तब भी एतन्नानावताराणां निधानं बीजमव्ययम् इस भगवान के कथनानुसार सब अवतारों के लय स्थान और उत्पत्ति स्थान श्रीमन्नारायण को मानने में भी शंका नहीं करनी चाहिये। और न भागवत के इस बचन को ही व्यर्थ समझना चाहिये इस लिये कि श्रीराम को छोड़कर अन्य सभी अवतारों के लय स्थान और उत्पत्ति स्थान मानने से श्रीमन्नारायण भी अवतार धारण करने वाले ही सिद्ध हो जाते हैं। और भगवान का यह उपर्युक्त बचन भी व्यर्थ नहीं अपितु चरितार्थ हो जाता है।

इसी प्रकार यद्यपि - एको ह्वै नारायण असीत् न ब्रह्मा न चेशानः यह श्रुति श्रीमन्नारायण को ही सब से पहले बताती है। इस लिये वह पीछे होने वाले श्री राम के अवतार कभी भी नहीं हो सकते हैं। तो भी यह श्रुति ब्रह्मा शिवादिकों की अपेक्षा ही श्रीमन्नारायण को पूर्व बताती है ताकि नर वाच्य श्री राम

की अपेक्षा। ऐसा भाव समझने से श्रुति का भी कुछ नहीं बिगड़ सकता है और श्रीमन्नारायण का भी कुछ नहीं बिगड़ सकता है।

यदि कहा जाय कि फिर श्रीराम को अवतारों में गिनने वाले बचनों की क्या दशा होगी ?

इसका समाधान यही है कि ये शास्त्र वचन श्रीराम का सर्व मूलत्व, मूल ब्रह्मत्व, छिपाने के लिये ही प्रयुक्त किये गये हैं न कि राम को अवतार मानने के लिये। विभव अवतारों में श्री राम का परिगणन (गिनती) भी इसी लिये ही किया गया है। क्योंकि परात्परं राममहं भजामि – इस सनत्कुमार संहिता में श्रीराम को पर श्रीमन्नारायण से भी पर कहा है अतः श्रीराम भगवान; श्रीमन्नारायण भगवान के अवतार नहीं माने जा सकते। और भागवत की अपेक्षा सनत्कुमार संहिता अधिक प्रबल है। इस लिये कि श्री भागवत रचयिता श्री व्यास जी के भी श्री सनत्कुमार संहिता के रचयिता श्री सनत्कुमार जी परगुरु हैं।

यदि यहां श्रीमन्नारायण को श्री राम का अवतार न मान कर श्रीराम को ही श्रीमन्नारायण का अवतार मानते हैं तो यह राम स्तुति न ठहर कर नारायण स्तुति ठहरती है। और तब इन त्वं त्रयाणां लोकानामादिकर्ता स्वयं प्रभु आदि बचन भी व्यर्थ ठहरते हैं और तब इन बचनों के अनुसार जो श्रीराम को तीनों लोकों के आदिकर्ता तथा स्वयं भगवान कहा है वह भी व्यर्थ ही हो जाता है। इस पूर्वोक्त कथन का ब्रह्मा जी स्वयं स्पष्टीकरण करते हैं जैसा कि—इदानीं कंठतः रामस्यः मूल ब्रह्मत्वं दर्शयति।

अक्षरं ब्रह्म सत्यं च मध्ये चान्ते च राघव।
लोकानां त्वं परोधर्मो विष्वक्सेन श्चतुर्भुजः॥ १५

शार्ङ्ग धन्वा हृषिकेशः पुरुषः पुरुषोत्तमः ।
अजितः खड्गधृग्विष्णुः कृष्णश्चैव बृहच्छलः ॥ १६
सेनानी ग्रामणी च त्वं बुद्धिः सत्वं क्षमादमः ।
प्रभवश्चाप्ययंश्चत्व मुपेन्द्रोमधुसूदनः ॥ १७

राम रहस्य भाष्यम्

अक्षरमिति—न क्षरति क्वापि कदापि नाशेनाप्नोतीत्यक्षर त्वमेव। अन्यत्रैतदक्षरं यद्यपि ब्रह्म विशेषणम्। तथापि एतद्वैत दक्षरं गार्गि ब्राह्मणा वदंति-एतदक्षरस्य प्रशासने सूर्या—चन्द्रमसौ विधृतौतिष्ठत इत्याद्यनेक श्रुतिभिरे तदक्षरं विशेष्य वत्स्वतन्त्रतया व्यवहृतम् । तेन यन्न कदापि क्षरति तदक्षरमपित्वमेवासीति भावः। अथच बृंहयति बृहयतीति वा तस्मादुच्यते परंब्रह्म—ब्रह्मवै दमग्र आसी दित्यादि श्रुत्या निखिलस्य जगतः पूर्वं विद्यमान त्वेन प्रतिपादितं यद्ब्रह्म, एवं च यतोवा इमानिभूतानि जायते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रत्यभिविशंति तद्ब्रह्मेति श्रुत्या निश्चितं च निखिलजगत उत्पत्ति स्थितिलयानां कारणं यद्ब्रह्म, तद्ब्रह्मापि त्वमेवासि। ननुस्वतः सिद्धं ब्रह्मणो यत्सर्व पूर्वत्वं सर्वमूलत्वं च तद्बहुकालात्पश्चाज्जाते श्रीमद्दाशरथौ कथमारोपयितुशक्यते, इतिचेच्छृणु—तथाहि—तदेवशुक्रं तद्ब्रह्म तदापस्तत्प्रजापतिरिति-श्रुतौतच्छब्द वाच्यस्य ब्रह्मतोऽपि पूर्वतनत्वेन प्रतिपादनात्तच्छब्द वाच्यमुद्दिश्य शुक्रत्वब्रह्मत्वादीनांविधानाच्च सच्च पूर्वोक्ति श्रुति-गत तच्छब्द वाच्यः श्रीराम एव। प्रमाणांचात्रद्यावाभूमीजनयन्देव एक स्तथैव एकोदेवः सर्वभूतेषु गूढ इत्याद्यनेक श्रुतिषुक्वचित सर्वोत्पादकत्वेनक्वचित् सर्वभूत व्यापक त्वेन च देव शब्दस्यापि ब्रह्मस्थानीयतयावर्णितत्वात्क्रीडार्थक रमुदिवु धातुभ्यां निष्पन्न

त्वेन देव राम शब्दयोः समानार्थकत्वात्पर्यायत्वा देवशब्दः श्री राम पर एवेति निश्चेतव्यमिति। इत्थं च ब्रह्मणोऽग्रत्वेन प्रतिपादितत्वेपि वस्तुतो न स्वतन्त्रेण तदग्रत्वमपितु श्रीरामविशेषणे न तदग्रत्वमिति न विरोधः। एवमेव पद्ममहापुराणेनापिलौकिका वैदिकाः शब्दा ये केचित्सन्ति पार्वति। नामानि रामचन्द्रस्य सहस्त्रं तेषुचाधिकमिति वचनात्सर्वेषां लौकिक वैदिक शब्दानाम राम वाच्यत्वं कंठत एवोद्घोषितम्। तेन पूर्वोक्त श्रुतिगत तद्यत्प्रभृति वैदिक शब्दानां राम वाचकत्वमेव। तेन, नामानि सर्वाणि यमाविशंतीतिश्रुत्यतः याति द्वितीयांतो यच्छब्दोपि रामवाचक एव, एतावतापि सर्व वेदगतानितद्यत्प्रभृतीनिसर्वाणि नामान्यपि श्रीरामचन्द्रस्यैव विज्ञेयानि। अतोरामयो न ब्रह्मभिन्नं, किन्तु रामस्यैवाभिधानं विशेषणंवा। मनुनापि – यत्तत्कारणमव्यक्तं नित्यं सद्सदात्मकम्। तद्विसृष्टः सपुरुषो लोके ब्रह्मेति कीर्त्यते इतिवचनेन ब्रह्मेति पुरुषस्य (रामस्य) विशेषणमेव कंठतः संप्रोक्तम्। एतमेव श्रीमद्भागवतेपितस्यापि भगवानेष साक्षाद्ब्रह्ममयो हरिः। अंशांशेन चतुर्धागात्पुत्रत्वं प्रार्थितं सुरैरिति वचनेन श्री रामस्य साक्षात् ब्रह्ममयत्वमेव प्रतिपादितम्। तेन यद्यपि ब्रह्म रामयोः पूर्वोद्भवत्व पश्चाद्भवत्वा भाव एव। तथापि तयोः पूर्वोद्भव पश्चाद्भवत्वेदुराग्रहवतां संतोषाम पश्चाद्भूते श्रीरामेमूलब्रह्मत्वमारोपयितु यथा शक्यते तत्प्रकार उच्यते तथाहि–

यथा पूर्वं जातस्य वसिष्ठस्य पुनश्च मित्रावरुणाभ्यां पश्चाज्जातस्य वसिष्ठस्य न नामरूपयोर्भेद आसीन्न पूर्वान्वयविच्छेदश्च। तथैव सर्व पूर्वस्य ब्रह्मणस्ततः पश्चाज्जातस्य श्रीमद्दाशरथेरामस्य न नाम्नोभेदो नरूपयोर्भेदस्तथैव न पूर्वान्वयविच्छेदः। दाशरथित्वेपि परंब्रह्मेति नामाव्याहतमेवेति भावस्तथाहि– एष रामः परं ब्रह्म कार्य कारणतः परम्। चराचर जगत्स्वमी नमानुषवपुर्धर इति पाद्मोक्त्या दाशरथित्वेपि स परंब्रह्मेति नाम्ना प्रसिद्ध एव

पुराणेषु। तस्य द्विभुजत्वमप्य व्याहृतमेव। केनोपनिषदि यच्च रूपेणतत्प्रदर्शितमेव प्रसिद्धमेव।

ननु शरीर रहितस्य ब्रह्मणः कथं द्विभुज वत्वं निरूप्यते इति चेदुच्यते-तथाहि-आत्मै वेदमग्रआसीत्पुरुषविध इति वृहदारण्यक श्रुतौतस्य पुरुष विधत्व वर्णनेन द्विभुजवत्वनिश्चयात्। बाहू राजन्यः कृत इति श्रुतावपि बाहु शब्दस्य द्विवचनान्त प्रयोग निर्देशाद्ब्रह्मणो द्विभुजवत्वनिश्चयात्। इत्थं ब्रह्मणो नामरूपं श्रीरामेण सह समानमेव। न मानुषवपुर्धर इतिवचनेना ज्ञानिनां दृष्टौ मानुषत्वेपि मानुषत्व निषेधात्। दिव्यलक्षण संयुतमिति वचनाद्दिव्य लक्षणाव त्वाश्चैवं तयोर्नामरूपयोर भेद एवेति सिद्धांतः। मानुषत्व निषेधेन मानुषवंशनिषेधे ब्रह्मणो यद्वंशं तदेव रामवंश मितिन पूर्वान्वय विच्छेदः। इत्थं नाम्नारूपेणैक्यं पूर्वं प्रदर्शितमिदानीं द्वयो वंशैक्यमपि प्रदर्शितमेव।

ननु रामनाम्नो भिन्नत्वेन नाम भेद एव न नामैक्यमिति चेन्न-तथा सत्यपि ब्रह्मेति रामेति च द्वयोरपि नाम्नो रेकार्थ त्वे नान्तराभावात्। तथाहि सर्वत्र रंतृत्वेनरमयितृत्वेनैव ब्रह्मत्वं सिद्धति। तेन राम एव ब्रह्म, ब्रह्मैवरामः। रामस्य पर्यायेते ब्रह्म, ब्रह्मणः पर्यायो रामः। यथाघटश्च कुम्भश्च द्वावेवैकार्थतत्परौ तथा ब्रह्म च रामश्च नूनमेकार्थं तत्परावित्यगस्त संहिता वचनमत्र प्रमाणमपि प्रदर्शितम् भवति।

इत्थं पूर्वं पश्चाज्जातयोर्वसिष्ठयो नाम रूपैक्यमिव ब्रह्मरामयो र्नामरूपैक्यं सिद्धमेव नात्र संशयलेशोऽपिरथित्वं तू पाधरेवपि श्रीराम तापिनोपनिषच्छ्रुत्यापि ब्रह्म रामयो नाम रूपयोरैक्यमेवो द्घोष्यते तथाहि।

रमंते योगिनोनंते सत्यानंदे चिदात्मनि।
इति राम पदेनासौ परंब्रह्माभिधीयते॥

रमंत इति - योगिनः, श्रीरामार्पण बुद्ध्या कर्माणि कुर्वन्त कर्म योगिन स्तथैव चराचरेषु भूतेषु राममेवाभिपश्यंतो ज्ञान योगिन स्तथैव नवधा भक्ति योगेन राममाराधयंतो भक्त योगिन एतत्त्रिविधा अपि योगिन यत्र रामपदवाच्ये सत्य स्वरूपे आनंद स्वरूपे चेतन स्वरूपे आत्म स्वरूपे अनन्त स्वरूपे-सत्यादिगुण गणविशिष्ट इत्यर्थः निष्काम कर्म योगेन समदर्शन रूप ज्ञान योगेन सख्यादि नानाविधै भक्ति योगेन चरमन्ते क्रीडंते इति श्रुति सिद्धव्युत्पत्त्या संसिद्धं यद्रामपदं तेनोपलक्षितोये रामपद बाच्यः श्रीमद्दाशरथीरामोऽसौदाशरथीरामः परंब्रह्मेतिनाम्नाभि-धीयते-अभिधाशक्त्या स रामः परं ब्रह्मेतिनाम्नोच्यते । एवं सत्यादि सर्व विशेषण प्रदर्शनेन श्रीराम मूलब्रह्म त्वं प्रतिशब्दितं श्रुत्या । तेन सर्वेषां विष्णु कृष्ण नारायण प्रभृतीनां ब्रह्मत्वेऽपि मूल ब्रह्मत्वं निरा कृतमेव ।

ननु तत्कथमिति चिचेदुच्यते तथाहि यद्यपितत्तदुपनिषत्सुते-षां सर्वेषा मभिधाशक्त्या ब्रह्मत्वं प्रतिपादितं तेन प्रत्येकं विष्णवादि ब्रह्मैव । तथापि तेषां ब्रह्म प्रतिपादन पराश्रुतासुश्रुतिषु सत्यादि सर्व विशेषणा नाम भावान्नमूल ब्रह्मत्वम् । यथा च-कृषिर्भू-वाचकः शब्दः णश्च निर्वृति वाचकः । तयोरैक्यं परंब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयते इत्यत्र सत्यानन्द इति द्वयोरेव विशेषणयोरैक्यमैव परं ब्रह्म रूपं यत्परंब्रह्मतदेव कृष्ण इत्य मिधीयते नतु कृष्णोपि परंब्रह्म इत्याभिधीयते । तेन परब्रह्मण एव कृष्णेति संज्ञा विहिता श्रुत्यानतु श्री कृष्णस्य परब्रह्मेति संज्ञाविहिता अयंभावः- अत्र श्रुतौ परब्रम्होद्दिश्य कृष्णत्वस्य विधानं नतु कृष्णमुद्दिश्य परब्रम्ह त्वविधानम् । इत्थञ्च श्रीकृष्णानिसक्तौ सर्व विशेषणाभावेन तथा च कृष्णामुद्दिश्य परब्रम्हत्वविधानाभावेनोभयथापि तत्र श्री कृष्णे मूलत्व मनुपपन्नमेव इत्यं च अनयानिरुक्त्या कृष्णस्य परब्रम्हत्व

नैव साधितमपितु परब्रम्हण एव कृष्णत्वं साधितम्। तेन श्री रामस्यैव परब्रम्हेति न तस्य विशेषणमपितु परब्रम्हण एव कृष्णेति विशेषणम्। अतः श्रीकृष्णोऽयं पर शब्दो निरर्थक एव तेन न समूलं ब्रम्ह। एवमेव विष्णुनारायणादिरपि न मूलं ब्रम्ह-अपितु केवलं ब्रम्हेति रहस्यम्।

इयं राम शब्दस्यैव निरुक्तिर्नतु ब्रम्हशब्दस्य। तेनात्र राम मुद्दिश्य ब्रम्हत्वविधानमेव नतु ब्रम्होद्दिश्य रामत्व विधानम्। तेन राम एव विशेष्यं, ब्रम्ह एव विशेषणम्। एवं विशेषणस्तु विशेष्याधीन एव नतु स्वतन्त्रः। छान्दोग्यादिषु स्वतन्त्रत्वेन 'विशेष्यत्वेन' प्रतीयमानोपि प्रत्यायमानोपि ब्रम्हशब्दो न विशेष्यपरोनापिस्वतन्त्रस्तथाहियत्तत्कारणमव्यक्तं नित्यं सदसदात्मकम। तद्विसृष्टोहि पुरुषोलोके ब्रम्हेति कीर्त्यते इति मनुस्मृति वचनाद्ब्रम्ह शब्दस्य पुरुष विशेषणत्वसिद्धेः। एवं सर्वेपि सत्यानन्दादयः शब्दा न विशेष्या न स्वतन्त्रप्रयोगार्हाः, आनंदशब्दोपि आनंदगुणपरः सोऽपिगुणिनि रामे एव स्थित्यर्हत्वान्न स्वतन्त्रो न विशेष्य आनन्दं ब्रम्हणो विद्वानिति श्रुत्यातस्य ब्रम्ह संबंधित्वे न कीर्तनाच्छ्री राम एव परं श्रेष्ठं (मूलं) ब्रम्हेति नात्र संशयावसरः। अतएव रमंते योगिनोऽनंत इत्यादि श्रुतेरनुष्ठितायां चिन्मयस्याद्वितीयस्य निष्कलस्याशरीरिणः। उपासकानां कार्यार्थं ब्रम्हणोरूप कल्पनेति श्रुतौ ब्रम्हणो रामस्यैवेयं शास्त्रेषु श्रूयमाणा नानावताररूपाकल्पनोपासकानां भक्तानामेव कार्यार्थं कार्य सिद्ध्यर्थं निरूपिता। अत्र मंत्रेऽशरीरस्येति शरीरनिषेधस्तु मायिकशरीरपरो नतुदिव्यशरीरपरः। एवं प्रकारेण पूर्वोत्तर रूपा ब्रम्हपूर्वं राम उत्तर इति शंकापि ब्रम्ह रामयोर्निरस्ता।

एव मेव सत्य नाम्नावेद्यो यः सोऽपि त्वमेव। रामः सत्पुरुषो लोके सत्यः सत्यपरायण इति महर्षिणापि समर्थित्तम। एवमेव रामः सत्यं परंब्रम्ह रामात्किंचिन्न विद्यते। तस्माद्रामस्वरूपत्वा-

रसत्यं सत्यमिदं जगदिति सनत्कुमार संहिता वचनेनापि श्रीरामस्य सत्यत्वं परब्रह्मत्वं समर्थितम्। अतएव सृष्टेरादौ मध्ये चान्ते त्वमेवावशिष्टो दृश्यसे इतिशेषः। हे राघव! लोकानां जनानां परोधर्मोपि त्वमेव। परधर्मत्वेनाराधनीयत्वमेवेत्यर्थः त्वदाराधनमेव परोधर्म इति बोध्यम्। यद्वा लोकानां जनमात्राणां यः परोधर्मः श्रेष्ठत्वेन शास्त्रेषु निर्णीतो योधर्मः सोऽपि त्वमेव। त्वद्धारणमंतरा धर्मान्तराणां व्यर्थ मेव अत एव-धर्मः स्वनुष्ठितः पुसां विष्वक्सेन कथासुच। न जनयेद्यदिरुचिं श्रमएव हि केवलमिति श्रीमद्भागवत वचनेन राम भक्तिमंतरा धर्मान्तराणां व्यर्थत्वं प्रदर्शितम्।

एव मेव योविष्वक्सेन नाम्नाप्रसिद्धः- यश्चचतुर्भुजवत्वेन प्रसिद्धः सोऽपि त्वमेव त्वदंशभूतस्त्वदवतारभूतएवेत्यर्थः।

तथैव यः शार्ङ्गधन्वा यश्च हृषिकेशः सोऽपि त्वमेव त्वदंशभूत एव। तथैव पुरुष एवेदं सर्वंयद्भूतं यच्चभाव्यमिति - सहस्त्रशीर्षा पुरुषा इतिनानाश्रुतिषुनिर्दिष्टो पुरुषः सोऽपि साक्षात्त्वमेव। एव मेव-अतोऽस्मि लोके वेदेच प्रथितः पुरुषोत्तम इतिस्मृत्युक्तयः पुरुषोत्तमः सोऽपित्वमेव। एवमेव योऽजितः दैवैरसुरैश्च जेतुमशक्यः सोऽपि साक्षात् त्वमेव। अतएव -ब्रह्मा स्वयं भूश्चतुराननो वा रुद्रस्त्रिनेत्रस्त्रिपुरान्तको वा। इन्द्रो महेन्द्रः सुरनायको वा स्थातुं न शक्तायुधिराघवस्येति श्रीमद्रामायणीय वचनं चरितार्थम् एवं च यः खड्गधृक्सोऽपि साक्षात् त्वमेव। धर्मव्यतिकर्तुः स्वधर्मस्त्यक्त्वा परधर्माचरणकर्तुश्शम्बूकशूद्रस्य शिरश्छेदनरूपदण्डदानेन तत्पाप नाशनाय खड्गधृक् साक्षात्त्वमेव भविष्यसीति-भविष्योक्तिः।

तथैव वेवेष्टिसकलं जगदितिनिरुक्त्या निष्पन्नोयो विष्णुशब्दस्तद्वाच्यो विष्णुरपित्वमेव त्वद्वतार एव। कथमिति चेदुच्यते ततस्त्वमसिदुर्धर्षस्तस्माद्भावात्सनातनात्। रक्षां विधास्थान्भूतानां

विष्णुत्वमुपजग्मिवामिति कंठतः प्रोक्तेन श्रीमद्रामायणीय काल वचनेन श्री विष्णुः श्री रामस्यावतार एव। एवमेव यः श्रीकृष्णः सोऽपि त्वमेव। त्वदवतार एव। तथाहि श्रीकृष्णोपनिषद्–यो रामः कृष्णतामेत्य सर्वात्म्यं प्राप्यलीलया। अतोषयद्देवमौनिपटलंतं न तोस्म्यहम्–महाविष्णु' सच्चिदानन्दलक्षणं श्रीरामचन्द्रं दृष्ट्वा सर्वाङ्ग सुन्दरं मुनयो वनवासिनो विस्मिता वभूवुः। तं ह्यो चुर्नोवद्यमवतारान्वै गण्यंते–आलिंगामोभवंतमिति। भवान्तरे कृष्णावतारे यूयं गोपिका भूत्वा मामालिंगथा। अन्येयेऽवतारा हि गोपाः न स्त्रीश्च नः कुरु। अन्योन्यं विग्रहंधार्यं तवांगस्पर्शना-दिह। शश्वत्स्पर्शयितास्माकं गृह्णीमोवतारान्वयम्। रुद्रादीनां वचः श्रुत्वा प्रोवाच भगवानस्वयम्। अंगसंगं करिष्यामि भवद्वाक्यं करोम्यहमिति कृष्णोपनिषद्।

अन्वय यार्थश्च– यदामहाविष्णुः श्रीरामचन्द्रो दण्डकारण्यं प्रविष्टश्चोवास च तत्र। तदातत्रत्यामुनयः श्रीरामसौन्दर्यं दृष्ट्वा मुमुहुः स्त्री शरीरेण राममालिंगितुं चकमिरे ते तं श्रीराममूचुश्च। भो-भागवन् श्रीराम! लोका अवद्यं निदितं यथास्माकं योषावतारा-न्नोगण्यन्ते न गण्यंतीत्यर्थस्तथाकुरु स्त्रीभूत्वावयं भवंतमालिंग-यितुमिच्छामः। तस्मादस्मान स्त्रीः कुरु, किंतु निन्दानस्या तथा कुर्वीतिभावः। श्रीरामस्तथाऽस्त्विति स्वीचकार उवाच चैतन्मनो-रथं युष्माकं सांप्रतं न पूर्णं करोमि किंतु भवान्तरे जन्मान्तरे कृष्णावतार एव पूर्णं करिष्यामि–तदायूयं सर्वे देवाः सर्वे मुनयश्च गोपिकाः गोपस्त्रीभूत्वा मामालिंगथानिःसंदेहम्। मुनय ऊचुश्च। अन्येऽस्माद्भिन्नाये देवा अत्रसंतिते यदि अवतारा अवतारेयु स्तर्हि ते गोपा एव भवन्तु नोऽस्मान्मुनींवस्तु स्त्रीश्च गोपीरेवकुरु। त्वयापि सर्वास्त्रीयुगपदालिंगितुं स्त्रीसमसंख्याकं विग्रहंधार्यं न त्वेकं विग्रहम्। एकविग्रहेण सर्दालिंगनमसंभवमेव। एवं त्वम-प्यस्मानवश्यं स्पर्शयिता। वयमप्यवतारान् गृह्णीमो करिष्यामः।

Vishal pandey

एवं रुद्रादिदेवतानां मुनीनां च वचः श्रुत्वा स्वयं भगवान् राम स्तेषां वचनं स्वीचकार प्रोवाच। अवश्यंयुष्माकमंगसंगं करिष्यामिभवतांवाक्यं पूर्णं करिष्यामितिभावः। एवं यो महाविष्णुः श्री रामः स एव कृष्णतामेत्य श्री कृष्ण वपुधृत्वा सर्वात्म्यं प्राप्ययुगपत् सर्वासामालिंगनंनप्राप्य सर्वाभ्यः गोपीभ्यः स्वालिंगनं दत्वा देवमुनिसमूहमतोषयत्त श्रीरामं न तोस्म्यहमितिश्रुत्यर्थः। एवं श्री कृष्णोपि श्री रामस्यावतार एव ननु कृष्णस्तु भगवान् स्वयंमिति श्रीमद्भगवत वचनाच्छ्री कृष्णस्यस्वयं भगवत्वं न तु श्रीरामवतारत्वमितिचेन्न। श्रुतिपुराणविरोधेतु श्रुतेर्बलीयस्त्वे नामापि पुराणापेक्षया। कृष्णोपनिच्छ्रुते रेवबलीयस्त्वान्न स स्वयं भगवान्। ज्ञयातन्नेतु श्रीरामापेक्षयेति रहस्यम्। लघुभागवतामृतोक्तं स्वयं भगवत्वं श्रीकृष्णस्यासिद्ध मेवोचितमेवेत्तिभावोथवा नारायणाये एवं तत्र स्वयं भगवत् प्रयोग स्त्वर्थवाद एव। तथैव हे राघव! बृहद्बलोपित्वमेव–श्रीमद् बलदेवोपि त्वदीयावतार एवेतिभावः। एवं च सेनान्यपि त्वमेव। स्कंदादयोदेव सेनान्योपि सर्वे त्वदंशा एव। वानर सेनानयनांतु साक्षात्सेनानी त्वमेव एवं च ग्रामान्नयतीतिग्रामणी राजापि साक्षात्त्वमेव। एवमेव बुद्धिरपित्वमेव त्वत्त एव बुद्धिमेधाप्रतिभादयः प्राप्यन्ते सर्वे, त्वमेव बुद्धिमेधाप्रतिभादीनामीश्वरोनिधिश्च। सत्वं वलंक्षमदमश्चेत्यादि सर्वगुणानामीश्वरोनिधिश्च त्वमेव। प्रभवत्यस्मादिति प्रभवः कारणमप्येति प्रलीयते जगद्यत्रेसप्रलयोपि त्वमेव साक्षादसीत्यर्थः। तथा चोपेन्द्रः श्रीवामनोपि त्वमेवत्वदंश एव। तथैव मधुदैत्यं सूदयतीतिमधुसूदनो विष्णुः सोऽपि त्वमेव त्वदंश एव। त्वदवतार एवेतिपूर्वमेव प्रतिपादितम्। इत्थंब्रह्म विष्णु–शिवानां गुणावतार त्वेन गुणप्रधानावतार त्वेन भागवते प्रसिद्धानां श्रीरामावतार त्वं प्रदर्शितंब्रह्मादिभिः।

रहस्य प्रकाशिका

अक्षर उसे कहा जाता है जिसका कभी भी कहीं नाश न हो। ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे राघव ! आप ही अक्षर अर्थात अविनाशी हैं। यद्यपि अक्षर शब्द शास्त्रों में ब्रह्म का ही विशेषण माना है, परन्तु फिर भी एतद्वै तदक्षरं गार्गि—इत्यादि अनेक श्रुतिओं में अक्षर का स्वतन्त्र रूप में अर्थात विशेष्य रूप से भी मिलता है। किन्तु यहां ब्रह्मा ने अक्षर को श्रीराम में ही चरितार्थ किया है। ऐसा करने से अक्षर भी श्रीराम का विशेषण ही ठहरता है। यदि उपर्युक्त वचन में भी अक्षर शब्द को ब्रह्म का विशेषण मानलें तो अक्षर जो ब्रह्म है वह भी आप ही हैं ऐसा यहां कहने मात्र ही है किन्तु तब वह अक्षर ब्रह्म भी श्रीराम का विशेषण हो जाता है जो कि इस रामस्तवन के सर्वथा अनुकूल ठहरता है। इस प्रकार अक्षर से ब्रह्म को भिन्न रख कर यह अर्थ होता है कि हे राम ! ब्रह्म भी आप ही हैं अर्थात बृंहयति बृहयति इति ब्रह्म इस व्युत्पत्ति से जो सब की अपेक्षा बड़ा है वही ब्रह्म है वह ब्रह्म आप हैं अथवा तो ब्रह्म वाइदमग्रआसीत् इत्यादि श्रुति से जो सबसे पूर्व है वह ब्रह्म है, वह ब्रह्म आप हैं। यदि जगत का करण ही ब्रह्म है तो वह ब्रह्म भी आप ही हैं अर्थात ब्रह्म आपका विशेषण है। यहां पर दो शंकायें हो सकती हैं—एक यह कि सबसे बड़ा तो आकाश भी है तो क्या श्रीराम आकाश भी है ?

समाधान यह कि आकाश भी बड़ा तो है किन्तु उसकी उत्पत्ति होती है नाश भी होता है और वह जड़ भी है अभावरूप भी है। अतः यह आकाश चेतन ब्रह्म नहीं है और राम भी नहीं हैं अर्थात राम का यह आकाश रूप ब्रह्म विशेषण नहीं हो सकता। किन्तु जो ब्रह्म चेतन है जो भाव रूप है और जो न उत्पन्न हुआ

है और न कभी नास हो सकता है उसी ब्रह्म को श्रीराम का विशेषण ब्रह्मा ने कहा है। दूसरी शंका यह कि ब्रह्म तो स्वतः ही सबसे पहले हैं और वही सभी के मूल भी हैं उन्हें पीछे से दशरथ महाराज के यहां प्रकट होने वाले श्रीराम पर कैसे थोपा जा सकता है अर्थात श्रीराम को अक्षर (अविनाशी) तथा ब्रह्म कैसे माना जा सकता है ?

इस का समाधान यह कि जैसे ब्रह्मा के पुत्र वसिष्ट जी मित्रावरुण के द्वारा उर्वसी से उत्पन्न होकर भी नाम और रूप से वह एक ही कहे और माने जाते हैं। अर्थात इन दोनों वसिष्ठों में न भेद प्रतीत ही होता है न माना ही जाता है। इसी प्रकार सभी से पहले विद्यमान माने जाने वाले ब्रह्म में और पीछे से दशरथ महाराजा के यहां प्रकट होने वाले श्रीराम के नाम रूप में भी कोई अन्तर (भेद) नहीं है। भाव यह कि दशरथ महाराज के यहां प्रकट होने पर भी उनका वही ब्रह्म नाम और द्विभुज रूप एक ही सा बना रहा है कोई भी अन्तर नहीं रहा है। केन उपनिषद में ब्रह्म, यक्ष नाम से तथा द्विभुज रूप से प्रसिद्ध ही हैं। यद्यपि लोक में दाशरथि का नाम राम ही प्रसिद्ध है। तथापि रामतपन उपनिषद् में तथा पद्मपुराण में उन्हें परंब्रह्म नाम से भी पुकारा है। अतः ब्रह्म और राम के नाम रूप में समानता ही है भेद नहीं।

यहां पर किसी को यह शंका भी हो सकती है ब्रह्म को तो सभी जगह शरीर रहित लिखा है तब उन्हें द्विभुज कैसे कहा और माना जा सकता है ?

इसका समाधान यह कि कहने वाले ब्रह्म को शरीर रहित कहते हैं कह सकते हैं किन्तु शरीर रहित सिद्ध नहीं कर सकते हैं क्योंकि आत्मैवेदमग्र आसीत्पुरुष विधः इस बृहदारण्यक की श्रुति में आत्मा को अर्थात ब्रह्म को पुरुषविध अर्थात पुरुष के

आकार के समान आकार वाला लिखा और माना है तब उसे शरीर हीन कभी भी नहीं माना जा सकता। ऐसी दशा में ब्रह्म को अर्थात राम को द्विभुज मानना ही उचित और न्याय संगत है। बाहू राजन्यः कृतः इस श्रुति में बाहू शब्द द्विवचनान्त है इससे ब्रह्म की अर्थात राम की दो भुजायें श्रुति सिद्ध ही हैं इसमें संशय नहीं। अन्य भी अनेक श्रुतियें ब्रह्म के शरीर की सिद्धि में प्रमाणरूप से यहां लिखी जा सकती हैं किन्तु विषयान्तर होने कारण यहां न लिख कर उन्हें मेरी स्वतन्त्र पुस्तक में जिस का नाम मूर्ति पूजा दर्पण है लिखा है वहां ही देखना चाहिए।

इस प्रकार श्रीमद्दाशरथि राम तथा उनसे पहले कहे जाने वाले ब्रह्म इन दोनों का नाम और रूप एक ही है अन्तर नहीं। इसी प्रकार मनुष्य शरीर के निषेध से मनुष्य वंश का भी निषेध ही समझना चाहिए। अतः ब्रह्म और राम का वंश भी एक ही ठहरता है। यहां एक शंका और भी हो सकती है वह यह कि– श्रीमद्दाशरथि राम का तो प्रसिद्ध नाम राम ही है तब तो वसिष्ट के समान नामैकता तो नहीं हुई, नाम में भेद ही हो जाता है।

समाधान यह कि– ब्रह्म और राम इन दो नामों में अक्षरों का ही भेद है न कि अर्थ का। दोनों नामों का अर्थ तो एक ही है। इस लिये कि सबसे बड़े हुए विना सब स्थानों का रमण नहीं हो सकता और सब स्थानों में रमण किये बिना सबसे बड़ा नहीं माना जा सकता। इस प्रकार इन दोनों नामों में परस्पर अभेद सम्बन्ध है। अतः दोनों नामों में ऐक्य भी सिद्ध हो जाता है। और तब जो ब्रह्म है वही राम है और जो राम है वही ब्रह्म है यह दोनों का ऐक्य भी सिद्ध हो जाता है भाव यह कि ये दोनों नाम एकार्थक होने के कारण पर्यायवाचक हैं। अगस्त्य-संहिता में इन्हें एकार्थक लिखा है जैसा कि—

यथा घटश्च कुम्भश्च द्वावप्येकार्थ तत्परौ ।
तथा ब्रह्म च रामश्च नूनमेकार्थ वाचकौ ॥

अर्थात जैसे घट और कुम्भ एक ही अर्थ (वस्तु) के वाचक हैं ऐसे ब्रह्म और राम भी एक ही तत्व के वाचक हैं। इस अगस्त्य संहिता से भी दोनों नामों का ऐक्य सिद्ध हो गया। इस प्रकार ब्रह्म और राम में पूर्व और पश्चात की शंका का भी निराकरण हो जाता है और तब ब्रह्म और राम को एक मानने में कोई बाधा नहीं फटक सकती।

श्रीराम तपन उपनिषद् में भी राम को ब्रह्म कहा है यह तो प्रसिद्ध ही है। परन्तु जो इस उपनिषद् को देख नहीं सकते हैं उनकी दृष्टि में यह बात अवश्य अप्रसिद्ध मानी मनायी जा सकती है अन्यथा नहीं।

यहां पर यह शंका की जा सकती है कि रमंते योगिनोनंते- इस मन्त्र में जिस राम पद की निरुक्ति (व्युत्पत्ति) दिखाई है वह राम पद अव्यक्त ब्रह्म का वाचक क्यों नहीं समझना चाहिये ?

समाधान यह कि राम शब्द प्रसिद्धि में श्रीमद्दाशरथि राम में ही रूढ़ कहो योग रूढ़ कहो है। इसी लिये उपर्युक्त श्रुति में राम पद की व्युत्पत्ति करके फिर राम पद वाच्य श्रीमद्दाशरथि राम को परब्रह्म कहा है। अन्यथा यहां का राम पद यह शब्द ही व्यर्थ हो जाता। जब कि यहां केवल राम शब्द से भी काम चल सकता है और तब उसके साथ पद शब्द की आवश्यकता ही नहीं रह सकती। तब यहां के राम पद शब्द से राम न समझ कर उन से भिन्न ब्रह्म का समझना अविवेक और दुराग्रह ही है।

यदि यह कहा जाए कि-रमन्ते योगिनोऽनन्ते-इत्यादि श्रुति

के पश्चात पठित – चिन्मयस्याद्वितीयस्य निष्कलस्याशरीरिणः। उपासकानां कार्यार्थं ब्रह्मणोरूप कल्पना-इस श्रुति में शरीररहित ब्रह्म को ही नाना रूप धारण करने वाला कंठ से कह दिया है श्रीराम को नहीं। क्योंकि इस श्रुति में राम नहीं अपितु ब्रह्म ही कहा है। इसका समाधान यह है कि इस उपर्युक्त श्रुति के अनुसार यदि हम वस्तु सत्ता के आधारभूत शरीर से रहित अर्थात निराकार ही ब्रह्म को मान लें। तब तो निराकारस्य शून्यत्वात शून्यस्य चावस्तुत्वात इस न्याय के अनुसार ऐसा ब्रह्म, ब्रह्म न ठहर कर शून्य ही ठहर सकता है तब तो उसके रूप धारण करने की बात, मेरी माता वंध्या है इस न्याय के अनुसार वदतो व्याघात दोष से ग्रस्त हो जाती है। इस वदतो व्याघात दोष की निवृति के लिये उनका शरीर मानना परमावश्यक है। श्रुति स्मृतिसिद्धि भी है और वही ब्रम्ह श्रीराम हैं यह बात रमन्ते योगिनोऽनन्ते इस श्रुति ने जब एक बार निश्चय कर दिया तब जहां भी सृष्टि प्रकरण में वा अवतार धारण के प्रकरण में केवल ब्रह्म शब्द आवे तो वहां श्रीराम ही को समझना चाहिये। अतः यहां भी और अन्यत्र भी राम ही मूल ब्रह्म हैं। अतः यह नाना रूप कल्पना श्रीराम ही करते हैं अन्य नहीं। अशरीर शब्द से यहां पर भी अन्यत्र भी मायिक शरीर का ही निषेध समझना चाहिए न कि दिव्य का। अतः श्रीराम का मनुष्य शरीर नहीं अपितु दिव्य शरीर ही है। श्रीमद्रामायण में भी कौशल्या जनपद्रामं दिव्यलक्षणसंयुतम इस बचन के अनुसार श्रीराम को दिव्य लक्षण लिखा है। अतः ब्रह्म का अर्थात राम का शरीर दिव्यातिदिव्य ही है मायिक नहीं।

इस प्रकार जैसे रामतपन श्रुति ने मूल ब्रह्म श्रीराम को ही माना है इसी प्रकार पुराणों ने भी मूल ब्रह्म श्री राम को ही माना है। जैसा कि—

लौकिका वैदिका शब्दा ये केचित्संति पार्वति।
नामानि रामचन्द्रस्य सहस्रन्तेषु चाधिकम् ॥

अर्थात लोक में व्याकरणादि शास्त्रों में और बोल चाल की सभी भाषाओं में अर्थात जितनें भी शब्द आते हैं और वेदों में उपनिषदों में जितने भी शब्द आते हैं वे सभी राम के ही नाम (वाचक) हैं। अतः वैदिक आत्मा ब्रह्म पुरुष आदि सभी शब्द प्रधान रीति से श्रीराम के ही वाचक हैं गौणरीति से चाहे वे किसी के भी वाचक हों।

इस प्रकार पद्मपुराण के उपर्युक्त वचानुसार भी श्रीराम ही मूल ब्रह्म हैं अन्य श्रीमन्नारायणादि नहीं। फिर ब्रह्मा जी कहते हैं कि – हे राम ! सत्य भी आप ही हैं अर्थात सत्य भी आपका ही नाम है। श्रीमद्रामायण में भी – रामः सत्पुरुषोलोके सत्यः सत्यपरायणः–इस वचन के अनुसार श्रीराम का नाम सत्य कहा है। इसी लिये सृष्टि की आदि में और अन्त में आप ही अवस्थित रहते हैं।

यहां एक बात और भी समझने की है वह यह कि जो आर्य समाजी वा अद्वैतवादी कहते हैं कि ब्रह्म तो व्यापक ही होता है उसे यदि देश में अवस्थित अर्थात किसी साकेत आदि लोक का निवासी मानें तो वह व्यापक नहीं ठहरता अर्थात उसकी व्यापकता नष्ट हो जाती है।

किन्तु उनका यह कहना अविवेकपूर्ण है। इस लिये कि जगत का तो प्रलय होता ही है, तब तो ब्रह्म की व्यपकता का भी प्रलय हो सकता हैं और व्यापकता का प्रलय होने से समझो कि ब्रह्म का भी प्रलय ही माना जा सकता है। भाव यह कि जब व्याप्य ही नहीं तो व्यापक (ब्रह्म) रहेगा ही कहां। अतः यह मानना कि व्यापक ही ब्रम्ह कहा और माना जाता है अज्ञान ही

है। सत्य बात तो यह है कि व्यापकता एक शक्ति है वह शरीर धारी ब्रह्म में रहती ही है। उस शक्ति से वह सब स्थानों में भी प्रकट हो सकते हैं। ऐसी दशा में व्याप्य जगत के नास हो जाने पर भी उस का अपने दिव्यातिदिव्य परम व्योम (साकेत-वैकुंठ) लोक में रहना वह दोष, नहीं माना जा सकता। ऋचो-ऽक्षरे परमे व्योमन्यस्मिन्देवा अधितस्थुर्विश्वेदिवीवचक्षुराततम् अर्थात उस अविनाशी परम व्योम नामक दिव्यादिव्य साकेतादि लोकों में वेदों और भक्तों समेत श्रीराम (मूल ब्रह्म) रहते हैं। यह श्रुति भी उसके निजी निवास के लोक में प्रमाण है।

फिर ब्रह्मा जी कहते है कि लोकों का अर्थात जनता का जो परंधर्म है अर्थात सर्व धर्मापेक्षया श्रेष्ठ धर्म जो है वह आप ही हैं। अर्थात रामाराधन ही सर्व धर्मापेक्षया श्रेष्ठ धर्म है। श्रीमद् भागवत में भी यही कहा है कि-धर्मः स्वनुष्ठितः पुंसां यतो भक्ति-रधोक्षजे अर्थात अधोक्षज श्रीराम में भक्ति होना ही परमधर्म है।

इसी प्रकार ब्रह्मा जी कहते हैं कि विष्वक्सेन भी आप ही हैं चतुर्भुज भी आप ही हैं और शार्ङ्ग धनुष के धारणकर्ता भी आप ही हैं और हृषीकेश भी आप ही हैं। वेद में प्रयुक्तपुरुष शब्द के वाच्य भी आप ही है। इसी प्रकार हे राम! पुरुषोत्तम भी आप ही हैं अर्थात जब श्रीमन्नारायणादि आपके अनेक रूप पुरुष माने जाते हैं तब उनमें आप पुरुषोत्तम माने जाते हैं। और अजित (अपराजित) भी आपही हैं। क्योंकि आपको किसी ने भी जीता नहीं है इसी प्रकार खड्गधृक् भी आप ही हैं अर्थात बटवारे से प्राप्त धर्म का उलंघन करके परधर्म को हथियाने वाले शम्बूक शूद्र को दण्ड देने के लिये खड्गधारण करने वाले आप ही हैं। भाव यह कि चातुर्वर्ण्यं च लोकेस्मिन्स्वेधर्मेनियो-क्ष्यति-इस वचन के अनुसार चारों वर्णो को अपने अपने धर्म में लगाने वाले आप ही हैं यह शम्बूकवध पंडित शूद्रों को

खटकता है, किन्तु इस में अन्याय नहीं है। इसी प्रकार विष्णु भी आप ही का अवतार हैं। ततस्त्वमसि दुर्धर्षस्तस्माद्भावात्स-नातनात्। रक्षां विधास्यन्भूतानां विष्णुत्वमुपजग्मिवान् – यह रामायणीय काल भगवान का वचन इस बात में प्रमाण है। इसी प्रकार श्री कृष्ण भी आप ही हैं अर्थात श्रीकृष्ण भी आप ही का अवतार है। श्रीकृष्ण उपनिषद् में यह बात प्रसिद्ध है जैसा कि–यो रामः कृष्णतामेत्य सर्वात्म्यं प्राप्य लीलया। अतोषयद्देव मौनिपटलं तं नतोस्म्यहम्। महाविष्णुं श्रीरामचन्द्रं दृष्ट्वा सर्वाङ्गसुन्दरं मुनयो वनवासिनो विस्मया बभूवुः। तं होचुर्नो-ऽवगद्यमवतारान्वैगण्यंते। आलिंगामोभवंतमिति। भवान्तरे कृष्णावतारे यूयं गोपिकाभूत्वामामालिंगथ। अन्येयेवतारा हि गोपाः नः स्त्रीश्चकुरु। अन्योऽन्यं विग्रहं धार्य तवांगस्पर्शनादिह शश्वत्स्पर्शयितास्माकं गृह्णीमोवतारान्वयम्। रुद्रादीनां वचः श्रुत्वा प्रोवाच भगवान्स्वयम्। अंगसंगं करिष्यामि भवद्वाक्यं करोम्यह इति कृष्णोपनिषद्। अर्थात जो श्रीराम भगवान श्री कृष्ण रूप धारण करके देवता और मुनियों के समूह को संतुष्ट किया। उन्हीं महाविष्णु श्रीरामचन्द्र जी को मेरा नमस्कार है। महा-विष्णु श्रीरामचन्द्र जी को जो कि सर्वांग सुन्दरातिसुन्दर हैं देख कर दण्डकारण्य वासी मुनिलोग और रुद्रादि देवता मोहित हो गये। और आलिंगन द्वारा श्रीराम को भोगने की इच्छा से स्त्री रूप की कमना करने लगे। और श्रीराम भगवान से याचना करने लगे। कहने लगे कि हे श्रीराम! हम स्त्री हो जायें और आपसे आलिंगन करें। और हमारे इन स्त्री रूपों की निन्दा भी कोई न करे ऐसा वर दीजिये। तब श्रीराम ने कहा कि इस समय तो नहीं किन्तु जब मैं कृष्ण बनूंगा तब आप लोग गोपी होना और मेरा आलिंगन करना। तब मुनियों ने फिर से कहा कि जो आपके साथ देवता आने वाले हैं वे सभी गोप हो जायें, और

हमें गोपी ही बनाइये। जिससे कि हम आपका आलिंगन कर सकें। इस वचन में नः नः यह जो द्विरुक्ति है वह आग्रह का सूचक है। ऐसा होने से ही हम परमानन्द का अनुभव कर सकेंगे। इस लिये आप भी एक-एक गोपी के साथ आलिंगन के लिये उतने ही रूप धारण करिये और हम सबको आलिंगन की सुलभता कर दीजिये। रुद्रादि देवताओं का तथा मुनि लोगों का यह वाक्य सुनकर स्वयं भगवान श्रीराम कहते हैं कि हे मुनिओं! हे देवताओं! आप लोगों का वाक्य मैं अवश्य पूरा करूंगा और अंगसंग करूंगा! इस श्री कृष्णोपनिषद के अनुसार श्री कृष्ण भी श्रीराम के ही अवतार हैं। अतः उन्हें जो स्वयं भगवान कह दिया है वह अर्थ वाद है। लघु भगवतामृत कारने सम्भव है श्रीकृष्णोपनिषद नहीं देखा होगा या तो फिर आंख मिचौनी करली होगी। गीता प्रेस के उपनिषदांक में कृष्णोपनि-षद का यह पहला भाग नहीं लिखा है यह पक्षपात किया गया है। इसी प्रकार श्री बलदेव जी भी आप ही हैं अर्थात वह भी आप ही के अंशावतार हैं। और सेनानी भी आप ही हैं क्योंकि वानर सेना का आपने ही नयन (संचालन) किया है। इसी प्रकार ग्रामीण भी आप ही हैं। इस लिए कि सर्वे सर्वं परित्यज्य राममेवाभिदुद्रुवुः। इस वचन के अनुसार सब लोक सब कुछ त्याग कर आपके पीछे दौड़ पड़े और महाप्रस्थान के समय कोई भी श्वास लेने वाला प्राणी अयोध्या में नहीं रह सका आप ही के साथ चल दिये। और बुद्धिसत्व क्षमा और दम आदि सद्गुण भी आप ही हैं अर्थात इनके निधि भी आप ही हैं। जिस किसी को ये गुण मिलते हैं तो आप ही से मिलते हैं। उत्पत्ति तथा प्रलय करने वाले भी आप ही हैं। अर्थात उत्पत्ति रक्षा और प्रलय करने वाले गुणप्रधान अवतार कहलाने वाले ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि भी आप ही के अवतार हैं। और उपेन्द्र

[श्रीवामन भगवान] तथा मधुसूदन भी आप ही हैं अर्थात आप ही के अवतार हैं।

इन्द्रकर्मा महाकर्मा पद्मनाभोरणान्तकृत् ।
शरण्यं शरणं च त्वामाहुर्दिव्या महर्षयः ॥ १८

राम रहस्य भास्यम

इन्द्रकर्मेति–इदिधातोः परमैश्वर्यार्थत्वात्प्रसिद्धे चेन्द्रे तस्याभावादत्रतद्वान्विष्णु रेवत विष्णोः कर्माणीव अद्भुतानि कर्माणि यस्य स एतादृशस्त्वमेव। अतएव महातिकर्माणि राज्यत्यागादीनि, रावण वधादि महातिकर्माणि अन्यैः कर्तुमशक्यानि कर्माणि यस्यैतादृशस्त्वमेव। पद्मनाभः श्रीमन्नारायणः सोऽपित्वमेवत्वदंश एवत्वदवतार एवेति पूर्वमेवोक्तम। एवमेव गगनं गगनाकारं सागरः सागरोपमः। राम रावणयोर्युद्धं राम रावणयोरिवेति वचनात्सर्वेषांरणानां युद्धानां मध्ये राम रावणयोर्युद्धस्य विशालत्वाद पूर्वत्वाद नंतत्वात्तस्यान्यन्तकृत्साक्षात्त्वमेवासि। त्वामंतरा श्रीमद्विष्णुनापि श्रीमन्नारायणे तदन्तं कर्तुमशक्यत्वादितिभावः। एवमेव शरणेसाधुः शरण्यस्तं शरण्यं त्वामेव दिव्या महर्षयो-नारदादय आहुः कथयंति तथैव शरणमिच्छवोः प्राणिनः शरणं गृहं रक्षितारं वाधर्मार्तस्यगृहमिव त्वामेवदिव्यामहर्षय आहुः कथयंतीत्यर्थः।

अयंभावः सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते। अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतं ममेति वाक्ये सकृदेकवारमेवाचार्य द्वारा कायिक प्रपत्तिकुर्वते शरणागताय तथैव सकृदेवैक वारमेव तवास्मीति च याचते सद्गुरु द्वारा वाचिक प्रपत्ति कुर्वते शरणागताय सर्वभूतेभ्यः सर्वप्राणिभ्योऽभयं ददामीति वर्तमानकालिक क्रिया प्रयोगेन प्रपत्ति करण काले एव सर्व भूतेभ्य यमराज समेत

यमदूतेभ्योऽभयदानस्य प्रतिज्ञा करणस्वभावात्त्वामेव शरण्यं सर्व शरण्यश्रेष्ठं सर्व शरण श्रेष्ठं च दिव्या महर्षयो नारदादय आहुः। तथाहि नमो ब्रह्मण्यदेवाय रामाया कुंठमेधसे उत्तम श्लोकधुर्याय न्यस्तदण्डार्पितात्मने इति श्रीमद्भागवत वचनेनोत्तम श्लोकेषु विष्णु कृष्ण नारायणादिषु श्रीरामस्य धुर्यत्वं समर्थितमेव। तेन श्रीराम एव सर्व शरण्यापेक्षया श्रेष्ठो न त्वन्य स्तत्र मोक्षयिष्यामीति भविष्यत्प्रयोगादभयदानस्य योग्यायोगात्व मीमांसार्थमेव विलम्बानुमानात्।

रहस्य प्रकाशिका

इन्द्र शब्द इदि धातु से बना है। इदि धातु का अर्थ है ऊंचे में ऊंचा ऐश्वर्य-वह प्रसिद्ध शचीपति में तो नहीं सिद्ध हो सकता है क्योंकि वह मेघनाद से रावण से परास्त हैं। अतः यहां इन्द्र शब्द से श्रीमद्विष्णु का ही ग्रहण परमोचित है। विष्णु के कर्म अवश्य प्रशंसनीय हैं उनके कर्मों के समान श्रीरामके भी कर्म प्रशंसनीय हैं। इस लिए ब्रह्मा जी कहते हैं कि आपके कर्म इन्द्र के अर्थात् विष्णु के कर्मों के समान हैं। और आप विष्णु की अपेक्षा महा कर्मा भी हैं क्योंकि विष्णु रावण को नहीं मार सके हैं और पद्मनाभ, जिन से कि ब्रह्मा जी प्रकट भये हैं आप ही हैं। अर्थात वह भी आप ही के अंश हैं अवतार हैं। और सभी रणों से जो बड़ा रण रावण का है उसका अन्त करने वाले आप ही हैं। गगनः गगनाकारः सागरः सागरोपमः। राम रावणयोर्युद्धो रामरावणयोरिव-इस वचन के अनुसार देवासुर संग्राम से भी राम रावण का युद्ध बड़ा ही माना गया है भाव यह कि यदि श्रीमन्नारायण भगवान रावण से युद्ध करते तो उस का अन्त कभी न होता। इस लिये कि वह रावण को न मार सकते, न युद्ध का अन्त ही होता। ब्रह्मा जी कहते हैं कि–

इसी प्रकार सर्व शरण्य भी और सर्व शरण भी आप ही है
अर्थात सर्व शरण्यों की अपेक्षा और सर्व शरणों की अपेक्षा
आप ही श्रेष्ठ हैं। इस लिये सकृदेव प्रपन्नाय तवासीति च या
य.चते। अभयं सर्व भूतोभ्यो ददाम्येतद्व्रतंमम्- इस वचन के
अनुसार एक बार सद्गुरु के द्वारा आपकी शरण में आने वाले
को तथा एक बार आचार्य द्वारा मैं तुम्हारा हूं ऐसी याचना करने
वाले को भी उसी क्षण अर्थात शरणागत होते समय सब से
अभय करने की अर्थात जन्म मरण रूप संसार से अभय कर
देने की प्रतिज्ञा श्रीराम ही की है अन्य की नहीं। श्रीराम से
भिन्नों में भविष्यकाल में अभय देने की प्रतिज्ञा सुनने में आती
है उसी समय में नहीं। जैसा कि सर्व धर्मान्परित्यज्य, इसीलिये
ही-नमो ब्रह्मण्यदेवाय रामायाकुण्ठमेधसे। उत्तम श्लोकधुर्याय
न्यस्तदण्डांघ्रिपाणये - इस वचन में भी श्रीराम को सभी उत्तम
श्लोकों में धुर्य अर्थात श्रेष्ठ कहा है।

सहस्रशृङ्गोवेदात्मा शत जिह्वोमहर्षभः।
त्वं त्रयाणां लोकानामादि कर्ता स्वयं प्रभुः॥ १९

राम रहस्य भाष्यम्

सहस्रशृङ्गइति - सहस्रं शृङ्गाणि शिखराणीव शिखराणि
शाखायस्य स सहस्र शृङ्गोवेदः स एव आत्मा श्वासोयस्य स भ-
वानेवास्ति। तथाहि-अरे अस्यमहतो भूतस्य निश्वसितमेत्तदृग्वेदो
यजुर्वेदः सामवेदो थर्वांगिरस इतिहास पुराणं विद्या उपनिषदः
श्लोकः सूत्राण्यनुव्याख्यानानीष्टं हुतमाशितं पायित मयं च लोकः
परश्चलोकः सर्वाणि च भूतान्यस्यैवैतानि सर्वाणि निश्वसितानीति
श्रुतिः। एवमेव शतसंख्याका जिह्वा चोदनारूपा विधयोपत्र श्रुति
स्मृतिषु स शत जिह्वः शास्त्रमपि त्वमेव। एतादृश शास्त्रस्येपदेष्टा

अपि त्वमेवेत्यर्थः । एवमेव महांश्चासावृषभ आलोचयिता विचारकर्त्तेति यावन्महर्षभोपित्वमेव । तथैव त्रयाणां लोकानां य आदिः श्रीमन्नारायणस्तस्यापि-कर्ता तदवतारकर्ता मूल भूतोऽवतार कन्दस्त्वमेवेति भावः । अन्यथा कर्ता सर्वस्य लोकस्येति ब्रह्मवचनं तथैव त्वं त्रयाणां लोकानामादि कर्तेति ब्रह्म वचनं-अथ च द्विरुक्तं- स्वयं प्रभुश्चेति ब्रह्म वचनमेव व्यर्थं स्यात् । स्वयं प्रभु शब्द स्यार्थस्तु स्वयं मेव यः प्रभु मूलंप्रभुर्भगवान् सस्त्व मेव नतु श्रीमन्नारायणस्य विष्णोर्वा त्वमेव तारभूत इति ब्रह्मादि नाम भिप्रायस्तेन दाशरथित्वेपि श्रीरामः सर्वेषामेव कन्द भूत इति तत्त्वम् । अतएव सूर्यस्यापिभवेत्सूर्योह्यग्नेरग्निः प्रभोः प्रभुरिति व वचनमपिसंगतं भवति । अन्यथा व्यर्थत्वापत्ति दुर्वारैव ।

रहस्य प्रकाशिका

हजारों शृङ्गों शिखरों के समान शृङ्ग (शिखर) हैं जिस वेद के वह वेद भी जिसके श्वास हैं वह वेदात्मा साक्षात् आप ही हैं ।

इसी प्रकार सैकड़ों आदेश रूप विधि रूप जिस शास्त्र में हैं वह शास्त्र भी आप ही के श्वास हैं, अर्थात शास्त्रों के आदि कर्ता भी आप ही हैं । वेद और शास्त्र आपके श्वास हैं इस में प्रमाण भी हैं जैसा कि-अरे ह्यस्य महतो भूतस्य निः श्वसितमेतदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदो थर्वांगिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनु व्याख्यानानीष्टं हुतमाशितं पाययितमयं च लोकः परलोकश्च । सर्वाणि भूतान्यस्यैव निःश्वसितानि ।

बस इस श्रुति के अनुसार वेद शास्त्रादि सब श्रीराम के निःश्वास हैं । इसी प्रकार बड़े से बड़े जो ऋषभ अर्थात विचारक हैं वह भी आप ही हैं । इसी प्रकार तीनों लोकों के जो आदि कर्ता श्रीमन्नारायण वा विष्णु हैं उनके भी कर्ता आप ही हैं । इसी प्रकार जो स्वयं प्रभु हैं वह तो साक्षात आप ही हैं । इसी

लिये—सूर्यस्यापि भवेत्सूर्यो ह्यग्नेरग्निः प्रभोः प्रभुः यह वचन संगत होता है। अन्यथा ये सभी वचन व्यर्थ हो जाते हैं।

सिद्धानामपि साध्यानामाश्रयश्चासि पूर्वजः।
त्वं यज्ञ स्त्वं वषट्कारस्त्वमोंकारः परंतपः॥ २०
प्रभवं निधनं वापि न विदुः को भवानिति।

राम रहस्य भाष्यम्

सिद्धानामिति—हे राम ! त्वं सिद्धाननां, ये च नानाविधानि साधनानि कृत्वा सिद्धिं प्राप्ता वा सर्वासां सिद्धीनामधीशाः संजातास्तेषामाश्रयस्त्वमेवासि त्वामाराध्यैवते सिद्धीः प्राप्तवंत इत्यर्थः। एवमेव ये साध्याः साधयितु योग्या या सिद्धयस्तासा-मपि, आश्रय स्त्वमेवासि। सिद्धयो पित्वामाराध्यैव प्राप्तुं शक्यं ते इत्यर्थः। पक्षान्तरे सिद्धानामस्मदादीनां ब्रह्म शिवादी नामि-त्यर्थः, तथैव साध्यानां साध्यादीनाम(सर्वेषां देवामपि आश्रयस्त्व-मेवासीत्यर्थः) साधनैः प्राप्तुं योग्यानां ब्रह्मशिवादि पदानामाश्रयः परमाधार भूत स्त्वमेवासि। यथाश्रयं विना किंचिदपिवस्तु, स्थितिमाप्तुं न शक्नोति तथैव ब्रह्मादयो वयमपि त्वां बिनास्थिति माप्तुं नशक्नुमः। त्वामाराध्यास्मदादीनां पदमपि प्राप्तुं शक्यते सर्वफल दातात्वमेवासीत्यर्थः। फलमत उपपत्तेरितिसूत्र प्रमाणात्, एवमेव पूर्वजोपि त्वमेव सर्वेभ्यो ब्रह्म-विष्णु-शिवादि भ्योपि तथैव श्रीमन्नारायणादपि त्वमेव पूर्वं जातोसि प्राकट्य मागतो-सीत्यर्थः। इन्द्रादीनामग्रे यः सर्वेभ्यः पूर्वमव्यक्ततां विहाय प्रकटितः स साक्षात्वमेवासीत्यपिपक्षः। एव मेवेज्यते पूज्यते यः सर्वत्र सर्वदा च सो यज्ञोपियज्ञ पुरुषोपि त्वमेवासीत्यर्थः। यज्ञेन यज्ञ मयजंत देवास्तानिधर्माणिप्रथमान्यासन्निति श्रुत्या देवाऽपि ये यज्ञं यज्ञपुरुषं त्वां द्रव्य यज्ञेन केचिद्वैखानसातपोयज्ञेन

केचिद्गृहिणोद्रव्य यज्ञेन केचिद्ब्रह्मचारिणः स्वाध्याय यज्ञेन केचित्सन्यासिनो जप यज्ञेन योग यज्ञेन च यमयजंत स साक्षा-त्वमेवासि । त्वां श्रीराम मेवा यजंत इत्यर्थः । इत्थमुपर्युक्त श्रुतौ यस्य यज्ञपुरुषस्य नाना यज्ञैर्यजनविधानमस्ति सो यज्ञपुरुषः श्रीराम एवेति ब्रह्मणोऽभिप्राय इतिभावः । अत्रार्षस्तवे ब्रह्मणा श्रीरामस्य यज्ञ (यज्ञ पुरुष) संज्ञा विधानात् । अन्यत्र सनत्कुमार संहितादिषु यज्ञेशं यज्ञपुरुषं यज्ञ पालन तत्परमिति वचनानुसा-रेण श्रीरामस्य यज्ञपुरुष संज्ञा श्रवणाच्च श्रीराम एव यज्ञ पुरुषः इति तेन यथा विष्णु यज्ञो विधियते तथा श्रीराम यज्ञोपि विधातुं शक्यते । एतेन राम यज्ञसत्ताविषयिका केषांचिच्छंकानिरस्ता तथैव राम यज्ञ विधिग्रन्थ शंकापि निरस्तैव । यथा विष्णु यज्ञ-विधि ग्रन्थोर्निर्मितो दृश्यते, तथैव राम यज्ञविधि ग्रन्थोपि निर्मातुं शक्यत एव । उपर्युक्त रामस्तुति तत्वानभिज्ञैः पण्डितकल्पैरेव श्री राम यज्ञ विधिग्रन्थो विलोपितः । मूर्खैश्च तन्मार्गोऽनुसृतः ।

एव मेवौंकारोपित्वमेव त्वद्विभूतिरेव प्रणवः छन्दसामह मिति वाक्येनौंकारस्य विभूतित्वेन निर्णीत त्वादोंकारो राम-विभूतिरेव नतुतद्वाचकः । अतएव, ओंकारोऽथ वषट्कारः सर्वे राम मनुव्रता इति श्रीमद्रामायणीय वाक्य गतौंकार सत्तायाः रामानु-वर्त्तित्वेन पृथङ्निर्दिष्टत्वात् । अन्यथा वषट्कारस्यापितद्वाचकत्वा-पतेः । ननु तस्य वाचकः प्रणव इति योग दर्शन सूत्रं निरर्थकमिति चेन्न । तस्यंनु सर्वे सर्वस्य वाचका इति न्यायमाश्रित्य चरितार्थ त्वात् । वंवषट् कारोपित्वमेवासि त्वद्विभूतिरेव ।

रहस्य प्रकाशिका

ब्रह्मा जी कहते हैं - हे राघव ! हम, ब्रह्मा और शिवादिक जो सिद्ध हैं और अनेक साधनों द्वारा हमारे पद पर आने की जो इच्छा रखते हैं इन सबका परम आश्रय आप ही हैं । जिस

प्रकार किसी भी आधार के बिना कोई वस्तु ठहर नहीं सकती। इसी प्रकार आप के आधार बिना हम लोग भी ठहर नहीं सकते। जो सिद्ध कार्यों अथवा साध्य कार्यों का जिनका कि साधन किया जा रहा है सभी के फल दाता आप ही हैं। फलमत उपपत्तेः यह सूत्र भी इसी बात को सिद्ध करता है।

इसी प्रकार आप ही सब श्रीमन्नारायणादि से पूर्व प्रकट हुए हैं। अर्थात अव्यक्तता को छोड़कर व्यक्त होने वाले आप ही हैं। केन उपनिषद वर्णित इन्द्र, अग्नि, वायु आदि देवताओं के सामने सब से पहले आप ही प्रकट हुए हैं। इसी प्रकार हे राघव ! यज्ञ अर्थात यज्ञ पुरुष भी जिसकी सदा और सर्वत्र द्रव्यादि यज्ञों से पूजा होती है आप ही हैं। भाव यह कि यज्ञेन यज्ञमयजत देवा इस श्रुति में जिस यज्ञ पुरुष का देवता अथवा विद्वान लोग द्रव्यादि यज्ञों द्वारा यजन पूजन करते हैं वह यज्ञ पुरुष आप ही हैं। क्योंकि उपर्युक्त श्रुति में भी यज्ञ पुरुष का ही द्रव्यादि यज्ञों द्वारा पूजन का विधान है। जो यज्ञ पुरुष हो उसका ही यजन पूजन हो सकता है। इस आर्षस्तव में ब्रह्मा जी ने श्रीराम को यज्ञ पुरुष कहा है। इस लिए श्रीराम यज्ञ भी हो सकता है, अर्थात श्रीराम को यज्ञ पुरुष संज्ञा रखने से समझो कि ब्रह्मा ने श्रीराम को यज्ञ की ही आज्ञा दी है। इस लिए श्री राम का भी द्रव्यादि यज्ञों द्वारा यजन पूजन हो सकता है। ऐसी दशा में राम यज्ञ के असद्भाव की किन्ही की शंका नष्ट हो जाती है और राम यज्ञ सम्बन्धी विधिग्रन्थ के अभाव की शंका भी दूर भग जाती है। क्योंकि अन्य यज्ञों के विधि ग्रन्थों के समान ही राम यज्ञ सम्बन्धी विधिग्रन्थ भी लिखा जा सकता है। प्रस्तुत रामस्तव के तत्व को न जानने वाले अज्ञानी लोगों ने जो अपने आपको पण्डित मानते हैं श्रीराम यज्ञ का लोप कर दिया है। मूर्ख लोगों ने उसी मार्ग पर चलना प्रारम्भ कर दिया है।

फिर ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे राघव! ओंकार भी आप ही हैं अर्थात आपकी वह विभूति है। प्रणवश्छन्दसमापि इस वचन में ओंकार को विभूति में ही गिना गया है। अतः यहां भी ओंकार को विभूति ही समझना चाहिये। न कि रामवाचक इस लिये भी, 'ओंकारोऽथवष्टकारः सर्वे राममनुव्रताः' इस बचन में श्रीराम के पीछे चलने से ओंकार की सत्ता का श्रीराम से पृथक ही वर्णन किया है। अन्यथा वष्टकार भी स्वरूपतः श्री राम ही सिद्ध होंगे। परन्तु वष्टकार भी विभूति ही हैं। इसी लिये ब्रह्मा ने कहा कि वष्टकार भी आप ही हैं। अर्थात वष्टकार भी आपकी विभूति हैं। परं तप का अर्थ तो स्पष्ट ही है।

दृश्यसे सर्वभूतेषु ब्राह्मणेषु गोषु च।
दिक्षु सर्वासु गगने पर्वतेषु वनेषु च॥ २०

राम रहस्य भाष्यम्

संप्रति श्रीरास्य दाशरथेर्व्यापक त्वं दर्शयति-दृश्यसे इत्यनेन तथाहि हे राघव! सर्वेषु भूतेषु पृथिव्यादिषु तथा सर्व प्राणिषु चान्तर्यामित्वेन त्वमेव वर्तसे। अतएव त्वद्भक्तैः सर्वत्र त्वमेवानुभूयसे, तत्वदर्शिभिश्चापि सर्वत्रात्मरूपेण त्वमेव दृश्यसे। एवमेव ब्राह्मणेषु गोषु चापि त्वमेवान्तर्यामित्वेन वर्तसे। ननु प्राणिमात्रेषु व्यापकत्वेन ब्राह्मणेषु गोष्वपि व्यापकत्वं सिद्धमेव पुनर्ब्राह्मणगवां पुनः कथनं पुनरुक्तिदोष एवेतिचेन्न-अविद्वयो वास विद्वयोवा ब्राह्मणो मामकीतनुरिति वाक्ये-गावोमेह्यग्रतु संतु गावो संतु पृष्ठत इति वाक्ये च तेषां प्राणिषु विशिष्ट त्वेनोदाहृतत्वात्। एव मेव सर्वासु दिक्षु दिशास्वित्यर्थ स्तथैव गगने सर्वेषु पर्वतेषु सर्वेषु वनेषु त्वमेव व्यापकत्वेन त्वद्भक्तै दृश्यसे ऽनुभूयसे।

ननु भूतान्तः पातित्वेन गगन स्यापिगृहीत त्वात्पुनर्गगन

व्याख्यानं व्यर्थमितिचेन्न गगनस्य स्वतो व्यापकत्वेन तत्र व्यापक स्यैव वस्तुतो व्यापकत्व सिद्धेरेवमेवाद्वितीय स्यापितत्रैवचरितार्थ त्वात्। एवं चेद् भूतशब्दे न प्राणिग्रहण पक्षेतु गगन शब्दोऽव-शिष्टानांपृथिव्यादीनामुपलक्षणम्। एवं श्रीरामस्य दाशरथेर्व्यापक त्वं श्रुत्वा दृष्ट्वापितमव्यापकम मन्यमाना असुर प्रकृतया भगव-द्दासाद्द्यानिरस्ता एव।

रहस्य प्रकाशिका

अब ब्रह्मा जी श्रीमद्दाशरथि राम की व्यापकता का वर्णन करते हैं वह कहते हैं कि हे राघव! आप ही सभी भूतों में अर्थात पंचभूतों में तथा सभी भूत प्राणिओं में अन्तर्यामी रूप से बैठे हुए हैं। इसी लिये आपके भक्त लोग भी सब में आप ही के दर्शन करते हैं और ज्ञानी लोग भी आत्म रूप से आप ही के दर्शन करते हैं। इसी प्रकार ब्राह्मण और गौओं में भी आप ही व्यापक हैं। ऐसी दशा में भगवद्दासादि जो लोग श्री राम को अव्यापक कहते हैं वे राक्षस ही हैं। यहां पर यह शंका होती है कि जब सभी प्राणिओं में श्रीराम व्यापक हैं तब तो ब्राह्मणों में भी और गौओं में भी तो व्यापक ही हैं फिर गौ और ब्राह्मण का पृथक व्याख्यान क्यों।

समाधान यह कि - अविद्योसविद्यो वा ब्राह्मणो मामकी तनु इस बचन के अनुसार तथा सूर्योग्नि ब्राह्मणों गाव इत्यादि वचन के अनुसार ये श्रीराम के विशिष्ट शरीर होने के नाते सब प्राणिओं से विशिष्ट है फिर भी उन में वह व्यापक रीति से भी रहते हैं। अर्थात इन में सामान्य रीतों से भी रहते हैं और विशेष रीति से भी रहते हैं।

यद्यपि इस बचन में गौ का नाम नहीं लिया गया है तथापि

ब्राह्मणानां गवां चैव कुलमेकं द्विधाकृतम् । एकत्रमन्त्रा स्तिष्ठंति हविश्चैकत्रतिष्ठति । इस बचन के अनुसार गौ और ब्राह्मण एक ही कुल के हैं । अतः ब्राह्मण शब्द यहाँ गौ का भी उपलक्षण है ।

इसी प्रकार सभी दिशाओं में तथा गगन में अर्थात आकाश में और सभी पर्वतों में तथा सभी वनों में भी आप व्यापक हैं । श्रीराम की यह व्यापकता रमते सर्व भूतेषु स्थावरेषु चरेषु । अन्तरात्मा स्वरूपेण यश्च रामेति कथ्यते । इस स्कन्द पुराण के वचनानुसार भी सिद्ध है । इस प्रकार शास्त्रों में वर्णित श्रीराम की व्यापकता सुन कर भी उनके नर नाट्य से मोहित जो उन्हें अव्यापक कहते हैं वे भगवद्दास जी आदि सभी बकवास ही करते हैं । और वे राक्षस ही हैं । रावण भी यही कहता था ।

सहस्र चरणः श्रीमान् शत शीर्षः सहस्र दृक् ।
त्वं धारायसि भूतानि वसुधां च सपर्वताम् ॥ २१

राम रहस्य भाष्यम्

अत्र पद्ये पुरुषसूक्तस्य सहस्रशीर्षा इति श्रुतेरर्थं श्रीराममुद्दिश्य ब्रह्मावर्णयति । सहस्रचरण इति हे राम त्वमेव सहस्रचरणोऽसि । सहस्रपादसीत्यर्थः । श्री सीतारूपयाश्रिणात्वं श्रीमानसि । शतशीर्षः सहस्रशीर्षापि त्वमेव । सहस्रदृक् सहस्राक्षोपि त्वमेव । पुरुषसूक्तवर्णित सहस्राक्षादि विशिष्टो योपि पुरुषः सत्वमेव त्वदवतारभूतःसस्त्वमेव तन्मूलमिति भावः । अत्रत्रिष्वपिपदेषु बहुव्रीहिःसमासो बोध्यः । परास्य शक्तिः विविधैव श्रूयत इति श्रुत्या विविध शक्तिमतः श्रीरामस्य सहस्रचरणत्वं सहस्र दृक्त्वं शतशीर्षत्वं नाश्चर्यावहं नापिविरुद्धम् । तदिदं सहस्राक्षस्य शचीपतेः सहस्रबाहोः कार्तवीर्यस्यापि शास्त्रप्रसिद्धमेव । सहस्रेति पदंतु त्रिष्वपि पदेषु असंख्यस्योपलक्षणमनंतस्योपलक्षणंवेतितत्वम् ।

सर्व शक्तिमत्वस्येद मुदाहरणमघटघटनापटीयस्त्वस्योदाहरणं वेतिबोध्यम्। हे राम! त्वमेव लक्षिता लक्षितरूपेण भूतानि चेतनभूतानि धारयसि त्वमेव सपर्वतां पृथ्वीमपिधारयसि। प्राणरूपेण चेतनानिभूतानि धारयसि शेषरूपेण पर्वतादि सहितां पृथ्वीमपि धारयसीत्यर्थः अतएव शेषोपि त्वमेव त्वद्‌वतार भूत-एवेति भावः।

रहस्य प्रकाशिका

इस पद्य में पुरुष सूक्त के प्रथम मन्त्रार्ध में भी श्रीराम की ही महिमा का वर्णन ब्रह्मा जी कहते हैं। जैसाकि—हे राम! आप ही हजारों चरणों वाले जिन को कि पुरुष सूक्त में सहस्र-पात् कहा है, और आप ही श्री सीता जी रूपश्री के कारण श्रीमान हैं। तथा हजारों मस्तक वाले तथा हजारों आंखों वाले जिन को कि पुरुष सूक्त में सहस्रशीर्षा तथा सहस्राक्ष कहा है, आप ही हैं। अर्थात् वह पुरुष सूक्त दर्शित पुरुष आप ही के अवतार हैं। इस श्लोक के सहस्रचरण और शतशीर्ष तथा सह-स्राक्ष इन तीनों पदों में बहुव्रीहि समास ही समझना चाहिए। परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते इस श्रुति के अनुसार ऊँचे में ऊँची सभी शक्तिओं वाले श्रीराम में, यह हजारों पैरों की हजारों मस्तकों की तथा हजारों आंखों की बात कोई आश्चर्यजनक नहीं समझनी चाहिये न प्रत्यक्ष के विरुद्ध ही समझनी चाहिये। इस लिए कि शचीपति इन्द्र की भी हजारों आंखें सुनने में आती हैं और कार्तवीर्य अर्जुन के हजार हाथ सुनने में आते हैं। शतपदी नामक एक कीड़े के सौ पैर देखने में आते हैं। रावण के दस मस्तक सुनने में आते हैं। उपर्युक्त तीनों पदों में सहस्र और शत ये दोनों शब्द अनन्त अर्थ के अथवा असंख्य अर्थ के वाचक समझने चाहियें। यह सहस्रचरण, सर्वशक्तिमत्ता का तथा

अघट घटना में कुशलता का उदाहरण समझना चाहिये। फिर ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे राम ! आप ही लक्षित तथा अलक्षित रूप से सभी चेतनों को धारण करते हैं अर्थात लक्षित (प्राण) रूप से सभी चेतनों को धारण करते हैं क्योंकि प्राणों के भी प्राण तो आप ही हैं। इसी प्रकार भूत शब्द से अचेतन भूतों का ग्रहण करने पर सभी अचेतन भूतों के धारण करने वाले भी आप ही हैं। इसके अतिरिक्त वन तथा पर्वतों के सहित इस पृथ्वी को भी आप ही धारण करते हैं, भाव यह कि पृथ्वी के धारण करने वाले श्री शेष जी भी आप ही का अवतार हैं।

अंते पृथिव्याः सलिले दृश्यसे त्वं महोरगः।
त्रींल्लोकान्धारयन् राम ? देवगंधर्वदानवान् ॥ २२

राम रहस्य भाष्यम्

अन्त इति पृथिव्या अन्ते विनाशे सति जल प्रलयकालिके जले महोरग रूपेण त्वमेव त्वं भक्तैर्दृश्यसे महोरगरूपं त्वमेव धृतवानसि महोरगोऽपित्वदवतारभूत इत्यर्थ। हे राम ! तस्मिन्नवसरे देवगंधर्वदानवात्मकां स्त्रींल्लोकान्धारयन्सन् त्वमेव सलिले जले दृश्यसे इतिभावः।

रहस्य प्रकाशिका

ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे राम ! आप ही पृथ्वी के नाश हो जाने पर महोरग का रूप धारण करते हैं। और उस अवसर पर देवता और गन्धर्व तथा दानवरूप तीनों लोकों की रक्षा भी महोरग का रूप धारण कर आपने ही की वा करते हैं। अर्थात

यह महोरग भी आप ही के अवतार हैं।

अहं ते हृदयं राम ! जिह्वा देवी सरस्वती ।
देवाःगात्रेषु रोमाणि निर्मिता ब्रह्मणापुरा ॥ २३

राम रहस्य भाष्यम्

अहमिति– हे श्रीराम ! अहं चतुर्मुखो ब्रह्मा ते तवं हृदयमेव त्वयैव ब्रह्मणाहं निर्मितोऽस्मि। या च सरस्वतीदेवी स ते तव जिह्वा सत्यपि सरस्वतिरूपेण त्वयैव ब्रह्मणा निर्मिता। एवमेव सर्वेपिदेवा इन्द्रादयस्तेतवरोमाणि रोमत्वेन निर्णीतास्त्वयैव ब्रह्मणा। सर्वदेवमनस्त्वमेवासीतिभावः।

रहस्य प्रकाशिका

ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे राम ! मैं अर्थात चतुर्मुख जो ब्रह्मा हूं वह आप का हृदय हूं अर्थात मन हूँ। 'स्वातं हृन्मानसं मनः'। भाव यह कि 'इन्द्रियाणां मनश्चास्मि' इस वचन के अनुसार मैं आपकी विभूति ही हूँ। आप ही ने मुझे ब्रह्मा बनाया है, इसी प्रकार जो सरस्वती देवी है वह आपकी जिह्वा है अर्थात वह सरस्वतीदेवी भी आप ही की विभूति है किन्तु आप ही ने उन्हें सरस्वतीदेवी बनाया है। और इन्द्रादिक जितने भी देवता हैं वे सब आपके शरीर के रोंगटे हैं आप ही ने उन्हें ऐसा देवता बनाया है।

निमेषस्ते भवेद्रात्रिरुन्मेषस्तेभवेद्दिवा ।
संस्कारास्तेऽभवन्वेदा नतदस्तित्वयाविना ॥ २४

श्रीराम रहस्य भाष्यम्

निमेष इति—हे राम ! येयं महाप्रलयरूपा रात्रिः स तेतव-निमेष एव । योऽयं दिवादिवसः सृष्टिकालः स तेत वोन्मेष एव । प्रलयकालस्तुतव पद्मणोनिमीलनम् । सृष्टिकालस्तुतव पद्यमणो रुन्मीलनम् । तव पद्मणोर्निमीलनोन्मीलनाभ्यामेवोत्पत्ति प्रलयौ संभवत इतिभावः । य इमेवेदास्तेतव संस्काराः । एवं च भवान्यत्र नास्तितद्वस्त्वेवनास्तिस्तीतिभावः ।

रहस्य प्रकाशिका

ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे श्रीराम ! यह जो प्रलय रूप रात्रि है वह आप का निमेष है और जो यह सृष्टिकाल है वह आपका उन्मेष है । अर्थात ये सृष्टिकाल और प्रलयकाल दोनों ही आपकी आंख के बन्द होने और खोलने मात्र से ही होते हैं । ऐसी कोई वस्तु ही नहीं जो आपकी इच्छा बिना उत्पन्न हो गई हो और ऐसी कोई वस्तु नहीं जहां आप नहीं हैं ।

जगत्सर्वं शरीरं ते स्थैर्यं ते वसुधातलम् ।
अग्निः कोपः प्रसादस्ते सोमः श्रीवत्सलक्षणः ॥ २५

त्वयालोकास्त्रयः क्रान्ता पुरास्वैर्विक्रमैस्त्रिभिः ।
महेन्द्रश्च कृतो राजा बलिंबद्ध्वा महासुरम् ॥ २६

श्रीराम रहस्य भाष्यम्

जगदिति इदं दृश्यमाणं सर्वं चराचरात्मकं जगत्तेतव शरीरं, त्वंतु तस्य शरीरीत्यर्थः। तथाहि यः पृथिव्यां तिष्ठन्पृथिव्या अंतरो यं पृथ्वी न वेद यस्य पृथ्वी शरीरं यः पृथ्वीमन्तरोयमयत्येषत आत्मान्तर्याम्यमृतः ३-३-७ वृहदारण्यकम। एवमेवापोपि यस्यते-त्तव शरीरं तथैवाग्न्याद यः सर्वेपि पंचमहाभूताः स्थावरा स्तेवत शरीरमेव। तथैव सूर्यादयः सर्वेग्रहास्तेतव शरीरमेव। एवंच यो-विज्ञाने (आत्मनि) तिष्ठन्विज्ञानादन्तरो यं विज्ञानं न वेद यस्य विज्ञानं (आत्मा) शरीरं योविज्ञानमंतरो यमयत्येषत आत्मान्त-र्याम्यमृतः २२-३-८। इति श्रुत्या विज्ञानरूपा य असंख्या आत्मा नस्तेपि सर्वेतेतव शरीरमेव। इत्थं सर्वं जगच्छ्रीराम शरीरमेव। रामस्तुतस्य शरीर्येव। एवं चेंदेवसुधातलं तेतव स्थैर्यं स्थिरता रूपोगुणः। एतेन पृथ्वी स्थिरैव न तुचला। सूर्य एव चलति नतु पृथ्वीति भावः तथैव योयमग्निः सतेतव कोप एव। प्रलयाग्निना तवकोपेनैवेदं चराचरं जगद्भस्मी भवति। एवं च योयं सोम-श्चंद्रः सतेतव प्रसन्नता रूपोमहान्दिव्यो गुणः। एवं च श्रीवत्स रूपंलक्षणं यस्य सविष्णुर्नारायणो वा सोपित्वमेव त्वदवतार भूतः। पक्षेद्विभुजस्त्वमपि श्रीवत्सलक्षणवानिति भावः।

हे श्रीराम। पुरा पूर्वं त्वयैव स्वैर्विक्रमै स्त्रिभिः पादैरिमे भूराट्त्रयोपिलोकाः क्रान्ता आक्रान्ता वामनरूपेणेत्यर्थः। त्वयैव महासुरं बलिं प्रतिज्ञा भंगेनहेतुना बद्ध्वा महेन्द्रशचीपती राजा कृतः पुनश्चेन्द्र पदं तस्मै शचीपतये त्वमेव दत्तवानित्यर्थः। इयं कथा पुराणप्रसिद्धा एव। यद्यपि वामनः श्री विष्णोरवतारस्त-थापि स श्रीमद्विष्णुरस्तु यथा श्रीमद्रामस्यैवावतार इतितु स प्रमाणं पूर्वमुक्तमतोनदोषः।

रहस्य प्रकाशिका

ब्रह्मा जी कहते हैं – हे श्रीराम ! यह दिखाई देने वाला सम्पूर्ण स्थावर और जंगम जगत आप ही का शरीर है। जैसा कि " यः पृथिव्यां तिष्ठन्पृथिव्या अन्तरो यं पृथिवी न वेद यस्य पृथिवी शरीरं यः पृथ्वीमन्तरोयमयत्येषत आत्मान्तर्यम्यमृतः" अर्थात जो पृथ्वी के अन्दर रहने के कारण पृथ्वी के अंतरात्मा होते हुये भी जिस को वह जानती ही नहीं, इस प्रकार जिस का शरीर पृथ्वी है, और जो पृथ्वी के अन्दर रह कर उसे नियम में रखता है वही तेरा आत्मा है अन्तर्यामी और अबिनाशी है। यहां पृथ्वी अन्य जलादि अचेतन भूतों का उपलक्षण समझना चाहिये। भाव यह कि जल भी और तेज वायु आकाश भी श्रीराम के शरीर ही हैं। इसी प्रकार सूर्यादि सभी चेतन भूत भी श्रीराम के शरीर हैं और जिसे विज्ञान अर्थात आत्मा कहते हैं वह भी श्रीराम का शरीर है। विज्ञान शब्द यहां पर आत्मा का ही वाचक है गुण का नहीं। क्योंकि गुण तो गुण ही होता है शरीर नहीं। शरीर और गुण स्वरूपत भिन्न ही होते हैं अतः उसे शरीर नहीं माना जा सकता। इस प्रकार संपूर्ण जगत श्रीराम का शरीर है। यहां पर यह शंका नहीं करनी चाहिये कि इन वृहदारण्यक श्रुतिओं में तो श्रीराम शब्द का उच्चारण तो नहीं किया गया है फिर जगत को उनका शरीर और उन्हें शरीरी कैसे माना जाय।

समाधान यह कि यहां पर ब्रह्मा जी तो जगत को राम का ही शरीर कह रहे हैं। जब ब्रह्मा जी ही जगत को उनका शरीर कह रहे हैं तो इस दारण्यक की श्रुति में भी उन्ही श्रीराम का ही जगत को शरीर कहा है, अतः कोई दोष नहीं। इसके अतिरिक्त " लौकिका वैदिकः शब्दा ये केचित्सन्ति पार्वति नामानि

रामचन्द्रस्य सहस्रान्तेषु चाधिकम् " इस पद्मपुराण के बचनानुसार सभी लौकिक वैदिक शब्द श्रीराम के ही वाचक होने के कारण इन उपर्युक्त श्रुतिओं में सामान्य शब्द के रूप में उच्चारण किये हुए जितने भी देवपुरुष आत्मादि यत्तत् और एष आदि शब्द हैं वे सभी श्रीराम के ही वाचक समझने चाहियें। इस रीति से बृहदारण्य की सभी श्रुतियें भी उन में वर्णित सभी पदार्थों को श्रीराम का ही शरीर कहती हैं यही मानना होगा। अतः उपर्युक्त शंका नहीं करनी चाहिये।

इसी प्रकार ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे श्रीराम ! यह जो पृथ्वी है वह आपकी ही स्थिरता रूप महान् दिव्य गुण है यह जो प्रत्यक्ष दिखाई देने वाली अग्नि है वह आपका ही कोप है। प्रलयाग्नि रूप आप के कोप से ही यह सारा जगत भस्म हो जाता है। इसी प्रकार यह जो चन्द्रमा है वह आपकी प्रसन्नता रूप महान दिव्य गुण है। इसी प्रकार श्रीवत्स लक्षण भी आप ही हैं अर्थात द्विभुज आप श्री राम भी श्रीवत्स लक्षण युक्त ही हैं।

फिर ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे श्रीराम ! पहले आपने ही वामन रूप धारण कर अपने तीन पैरों द्वारा ये भूवादिक तीनों लोक घेर लिये थे। और आपने ही महान् असुर उस बलिराजा को प्रतिज्ञा भंग करने के कारण बांध कर फिर से पदच्युत इन्द्र को अपना पद दिलवाया और राजा बना दिया। यह कथा पुराणों में प्रसिद्ध है यद्यपि यहां यह शंका हो सकती है कि श्री वामन जी को तो विष्णु का ही अवतार लिखा है श्रीराम का नहीं। ऐसी दशा में वह श्रीराम के अवतार कैसे हुए।

समाधान यह कि जब स्वयं श्री विष्णु अथवा स्वयं श्रीन्नारायण ही श्रीराम के अवतार हैं तो फिर श्रीवामन को भी श्री राम का अवतार कह सकते हैं। अतः कोई दोष नहीं।

सीता लक्ष्मीर्भवान्विष्णुर्देवः कृष्णः प्रजापतिः।
वधार्थं रावणस्येह प्रविष्टौ मानुषींतनुम् ॥ २७

श्रीराम रहस्य भाष्यम्

सीतेति- हे राम ! यथापुरा श्री सीतैवलक्ष्मीजाता यथाच पुराभवानपि विष्णुर्जातस्तथैवेदानीमपि सीतारामौद्वौमानुषींतनूं मानुषलोकं प्रविष्टौ स्तः । मानुषीं तनुं शब्दस्यात्र मनुष्य लोक रूपोर्थ एव। श्री सीता रामयोरूभयोरपि यज्ञीय भूमेः सकाशा-द्यज्ञीय चरूभक्षणेन चोत्पन्नत्वान्मानुषशरीरासंभवात् । एष रामः परंब्रह्म कार्यकारणातः परम् । चराचर जगत्स्वामी न मानुष वपुधर इति पाद्मवचने मानुषतनोर्निषेधाच्च । कौशल्या जनय-द्रामं दिव्यलक्षणसंयुतमिति दिव्य लक्षणोक्तत्वेन मानुषतनौ दिव्य लक्षणा संभवात्। सर्वे नित्याः शाश्वताश्च देहा ह्यस्यपरा-त्मनः। हानोपादानरहितानैव प्रकृतिजाः क्वचिदित्यादि वचना दपि श्रीरामदेहस्य चिदानन्दमयत्वेना ऽप्रकृतत्वेना भौतिकत्वेन वर्णितत्वाच्च एवं च ये मायावादिनो श्रीराम कृष्णादीनां देहं मायिकं भौतिकं वावदन्ति ते मिथ्या वादिनः प्रलपन्त्येव शास्त्र विरूद्धं जल्पंत्येव। एवं च द्यावा पृथ्वी जनयन्देव एक इतिश्रुता वद्द्वितीयत्वेन निरूपितो योदेवः सोऽपिसाक्षात्त्वमेव। दिवुरमुधा-त्वो क्रीडार्थकत्वात्ताभ्यांनिष्पन्नौ देव राम शब्दौ समानार्थक त्वात्पर्यायावेवेत्यर्थः। कृष्णोपि यथा त्वमेव तथा पूर्वमेवोक्तम्। प्रजापतिरपित्वमेव प्रजापत्यादयः सर्वेपि ऋषयः यज्ञवोदेवाः मनु पुत्रामहौजसः। कल्पा सर्वे हरेरेवसप्रजापतयस्तथा इति वचना-नुसारेण त्वदीय कलावतारा इत्यर्थः।

ननु रावण वधार्थमत्र विष्णु लक्ष्म्योरेव मानुषतन्वोः कंठतः प्रवेशकथनाद्राघवत्वे भवेत्सीता रुक्मिणी कृष्णजन्मनीति विष्णु

पुराणोनापि कऽतः निर्दिष्टत्वाच्छ्रीसीता-रामौ लक्ष्मी विष्णवोरेवावतारावितिचेन्न । यामिच्छसि महाबाहो तांतनुप्रविशस्विकाम्, वैष्णवी वा महातेजा यद्वाकाशंसनातनमिति वचनेनाकाशविष्णवोरेकतरेरामशरीरे यथा कामं प्रवेशनिर्देशाद्राम शरीरत्वेन विष्णुः रामस्यावतार एवेतदितिदिक् । आकाश शब्दोऽत्र मूलब्रह्म परत्वमतिरामशरीरपरःनन्वेवं – एतस्मिन्नन्तरे विष्णुरूप यातो महाद्युतिः । त्वांनियोक्ष्यामहे विष्णो लोकानांहितकाम्यया । विष्णो पुत्रत्वमागच्छ कृत्वात्मानं चतुर्विधम् । अवध्यं दैवतैर्विष्णो समरेर्जहिरावणम् । एवं दत्वा वरंदेवो देवानां विष्णुरात्मवानित्याद्यनेक वचनेषूपनिबद्धस्य विष्णुशब्दसमूहस्य कागतिरितिचेदुच्यते श्रृणुतावत्समाहितः सन्निति ।

तथाहि ततः पितामहोवाणीमन्तरिक्षादभाषत । आगच्छ विष्णोभद्रन्ते दिष्ट्या प्राप्तोसि राघवेत्यत्रपद्ये राघवत्वेपि विष्णुत्वं निर्दिष्टं ब्रह्मणा । श्रीमद्राघवं भगवन्तमपि हे विष्णो इति संबोधनेन संबोधितं ब्रह्मणेत्यर्थः । पदार्थस्तु हे राघव ! हे विष्णो त्वमागच्छतव स्वागतमित्यर्थः । तवगमनादेव रावणाक्रांतनृलोकस्य भद्रमभूत्तथैवात्रागमनादस्मांकं त्वद्विरहातुराणां, त्वल्लोकवासिनां त्वद्भक्तानां च भद्रं भविष्यति, अतोदिष्ट्या प्राप्तोसि । एतेन श्रीरामस्य विष्णुसंज्ञानिर्बाधा । एवमेव पाद्येपि श्रीरामस्य विष्णु संज्ञाब्धिः समर्थिता तथाहि 'विष्णुमासिसमुत्पन्नो विष्णुस्तेनाभिधीयते' अर्थात विष्णु मासश्चैत्रमासस्तत्र समुत्पन्नत्वेन श्रीरामोपि विष्णुनाम्ना अभिधीयते अभिधा शक्त्या कथ्यत इत्यर्थः । एवं च 'विष्णुनायं समुत्पन्नो विष्णुस्तेनाभिधीयते ।' अर्थात यज्ञोवै विष्णुरितिश्रुत्यात्रविष्णु शब्दो यज्ञ परस्तेन यज्ञेन यज्ञीय चरूभक्षणाद्धेतोः समुत्पन्नत्वेन श्रीरामोपि विष्णु रेव । एवं पाद्योक्तरीत्यापि श्रीरामोविष्णुरेव ।

एवमेव यथा वेवेष्टि सकलं जगदिति व्युत्पत्त्यानिष्पन्नो विष्णु

शब्दो व्यापक त्वेन हेतुना विष्णौगरूढस्तवद्भवदेव " रमते सर्व भूतेषु स्थावरेषु चरेषु च अन्तरात्मस्वरूपेण यच्च रामेति कथ्यते" इति स्कन्दीयनिरूक्त्या स्थावर जंगमात्मके जगति व्यापकत्वा च्छ्रीरामेपि योगरूढ एव । अयंभावः, यथा चराचरात्मके जगति व्यापकत्वेन हेतुना विष्णु रूच्यते तथैव चराचरात्मके जगति रमणात् व्यापकत्वाद्राम उच्यते । यो व्यापकः स एव सर्वत्ररन्तुं शक्यते यः सर्वत्र रमते स एव सर्वं व्याप्तुं शक्यते, एवं च समानार्थकत्वेन श्रीरामोपि विष्णुरेव । एवं च पूर्वोक्तेषु श्रीमद्रामायण वचनेषु सर्वत्र विष्णु शब्दे न राम एव बोध्यः । यद्यपि विष्णोः गरूडारूढत्वेन पूर्वोक्त वचनेषु विष्णु शब्दे न विष्णु ग्रहणं संगतं राम ग्रहणम् संगतमेव । तथापि " अहं सखाते काकुत्स्थ" इति गरूडोक्त्या श्रीरामस्यापि गरूडारूढत्वं सिद्ध्यत्येव ।

न चेदं बुद्धिव्यामोहनमेवेति वाच्यं - इत्थं च यथा शास्त्र पर्यालोचनया श्रीमद्दाशरथेः श्रीरामस्य साक्षात्परब्रह्मत्वं च निर्वाधं सिद्ध्यति । तथैव श्रीसीताया अपि सर्व देवी मूलत्वं शास्त्र पर्यालोचनया सिद्ध्यति । तथाहि ।

सद्यस्ते सिद्धिमायांति ये सीतापदचिंतकाः ।
यस्याः संकल्प मात्रेण सृष्टिस्थितिलयादिका ॥
भवंति जगतां नित्यं व्यापारा ऐश्वरा अमी ।
सीता मृत्युः सुधाचेयं तपत्येषा च वर्षति ॥
स्वर्गो मोक्षस्तपो योगो दानं च तव जानकी ।
ब्रह्माणं शिवमन्यांश्च लोकपालान्मदात्मकान् ॥
करोत्येषाऽकरोत्येव नान्या सीता तव प्रिया ।

इति पद्म वचनेषु श्रीसीतायाः संकल्पमात्रेण जगत उत्पत्त्यादिकं ब्रह्मा शिवादीनां सर्व लोकपालानां चोत्पत्यादिकं स्वर्गमोक्ष

दातृत्वं सुस्पष्टमेव वर्णितम्। श्री सीतोपनिषद्यपि- मूल प्रकृतिरूप त्वात्सा सीता प्रकृतिर्मता। प्रणव प्रकृतिरूपत्वात्सीता प्रकृति रूच्यते। श्रीराम सान्निध्यवशाज्जगदानंदकारिणी। उत्पत्ति-स्थिति संहारकारिणी सर्व देहिनाम्।

सा सीता वेदमयी सर्व देवमयी सर्व लोकमयी सर्व धर्ममयी सर्वाधारमयी कार्यकारणमयी महालक्ष्मीर्देवेशस्य (श्रीरामस्य) भिन्ना भिन्नरूपेति श्रुत्या श्रीताया एव मूल प्रकृतित्वेन वर्णित त्वात्सुतरां प्रकृतेरपिमूलत्वादित्यर्थः। प्रणवस्यापि प्रकृतित्वात्का-रणात्वादित्यर्थः सर्व देहिनामिति स्थावराणामुपलक्षणं, तेन चराचर जगतोऽप्युत्पत्ति स्थिति संहार कारणत्वात्सर्व वेदमयी त्वात्सर्व देवमयीत्वात्सर्वलोकमयीत्वात्सर्वधर्ममयीत्वात्सर्वा धारमयीत्वात्सर्व कार्य कारणमयीत्वान्महालक्ष्मीत्वाच्छ्री-सीताया इच्छाशक्तेरेव श्री भूलीलीरूपैरूत्पन्नत्वात्सुतरां यथा श्रीमन्नारायणः श्रीरामस्याद्यावातार स्तथैव श्रीलक्ष्मीरपि श्री-सीताया आद्यावतारभूता, श्री भूदेवी द्वितीयावतार भूता, श्री नीलदेवी, तृतीयावतार भूता। अतएव "श्रियाः श्रीश्चभवेदग्र्या कीर्त्याः कीर्तिः क्षमाक्षमाः। वसुधायाहि वसुधांश्रियाः श्रींभर्तृ-वत्सलाम्"। इति श्रीमद्रामायण वचन योरपि, एकत्रस्तु प्रसिद्ध श्रुयपेक्षया श्रीसीताया अग्र्यत्वेन वर्णितत्वात् सुतरांतस्यास्ततः श्रेष्ठत्वात् अन्यत्रापि तथैवा वर्णितत्र्त्वात् द्वयोरपि वचनयोः श्रियाः श्रीत्वेननिर्दिष्टत्वात्सुतरां श्रीलक्ष्मीः श्रीसीताया अवतार भूतैव।

ननु राघवत्वे भवेत्सीता रुक्मिणी कृष्ण जन्मनीति विष्णु पुराण वचनाच्छ्रीसीतैव श्रीलक्ष्म्यावतारः सिद्ध्यतीचिचेन्न-श्रुति पुराणयोर्विरोधे श्रुतेरेव वलीयेस्त्वात्पुराण पेक्षयेतिहासस्या पि बलीयस्त्वाच्च - तेन श्रीलक्ष्मीः श्रीसीताया अवतार भूतैव नतु श्रीलक्ष्म्याः श्री सीतावतार भूतेति सिद्धांतः। किन्तु शास्त्र

रहस्यानभिज्ञैः वेदरत्नेति मिथ्योपाधि धारिभिराचार्य मन्यैः पंडितकल्पैः सदैव शास्त्रविरुद्धमेवोद्धोष्यते सदैव श्रीसीता विरुद्धं श्रीरामविरुद्धमेवोद्घुष्यतेतरुद्धासीता रामभक्तैरनादरणीय मेव।

उपर्युक्त रीत्या श्रीमन्नारायणा पेक्षया श्रीरामस्य परतत्वत्वं परंब्रह्मत्वं मूलब्रह्मत्वं साकेताद्रावणवधार्थं लोकशिक्षणार्थमाग मनं प्रतिपादितं ब्रह्मणानेन स्तवनेन। तेन वस्तुतो योहं यस्य यत श्चाहमिति श्रीराम प्रश्नानामुत्तरमेव संसाधितं ब्रह्मणा।

रहस्य प्रकाशिका

ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे श्रीराम! जैसे पहले श्री सीता जी सागर मन्थन से श्री लक्ष्मी रूप में प्रकट भई थीं और वैसे आप भी श्रीमद्विष्णु स्वरूपसे बैकुंठ में पहले प्रकट भये थे। इसी प्रकार इस समय भी आप दोनों मानुषी तनु अर्थात मनुष्य लोक में प्रकट हुए हैं। यहां पर मानषीं तनु इन दो शब्दों का मनुष्य लोक ही अर्थ करना ठीक है मनुष्य शरीर नहीं। इस लिये कि श्री सीताभगवती यज्ञ भूमि में से ही प्रकट हुई हैं और श्रीराम भगवान भी तो यज्ञावशिष्ट चरु के भक्षण से ही प्रकट हुये हैं। अतः इन दोनों के शरीर को मनुष्य कहना, मनाना कभी भी ठीक नहीं। इसके अतिरिक्त "एषरामः परंब्रह्म कार्य कारणतः परम्। चराचर जगत्स्वामी न मानुष वपुर्धरः" इस पद्मपुराण के वचन में भी श्रीराम के शरीर को मनुष्य का शरीर मानने का निषेध किया है। इसके अतिरिक्त "कौशल्या जनयद्रामं दिव्यलक्षण संयुत्तम" इस श्रीमद्रामायण के वचन में भी श्रीराम को दिव्य लक्षणयुक्त कहा है। अतः उनके शरीर को मनुष्य शरीर नहीं माना जा सकता क्योंकि मनुष्य शरीर में मनुष्य के लक्षण छोड़ कर दिव्य लक्षण नहीं हुआ करते। और

“ सर्वे नित्याः शाश्वताश्च अदेहाह्यरयपरात्मनः। हानो पादान रहिताः नैव प्रकृति याकचित्” पद्मपुराण के इस वचन में भी श्रीराम के सभी शरीरों को शाश्वत और उत्पत्ति विनाश रहित कहा है, और प्रकृति से उत्पन्न होने का निषेध किया है। भाव यह कि श्रीराम के जितने भी शरीर हैं वे सभी सच्चिदानन्द स्वरूप हैं। श्री राम के शरीरों में देही और देह का विभाग नहीं है। अर्थात जैसे मनुष्यादि जीवों में देही और देह का विभाग है ऐसा श्री राम में नहीं है। फिर भी अद्वैत वादी श्री शंकराचार्य ने श्रीराम के सभी शरीरों को मायिक माना है। और उनके अन्य अनुयायिओं ने पांच भौतिक माना है, जो कि उपर्युक्त शास्त्र वचनों के विरुद्ध है। अतः अद्वैत वादीओं के इस मिथ्या कथन को कभी सत्य नहीं समझना चाहिये। उनका यह कथन कोरा बकवाश ही है। फिर ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे श्रीराम ! आप ही देव हैं अर्थात 'द्यावापृथ्वी जनयन्देव एकः” इस श्रुति में जिसे पृथ्वी और स्वर्गादि को उत्पन्न करने वाला एक अर्थात अद्विती देव कहा है वह आप ही हैं। इस लिये कि दिक् और रमु धातु का क्रीडा अर्थ भी समाज ही है। अतः इन दोनों से निष्पन्न देव और राम दोनों शब्द भी पर्याय वाचक हैं इसी कारण श्रीराम ही साक्षात देव हैं, अन्यत्र देवत्व साक्षात नहीं औपचारिक है। इसी प्रकार हे श्रीराम ! आप ही श्रीकृष्ण हैं अर्थात आप ही का अवतार श्रीकृष्ण हैं। यह बात पहले लिख दी है, इसी प्रकार हे श्रीराम ! “ प्रजापतिश्चरतिगर्भे ” इत्यादि श्रुति के अनुसार जो प्रजापति हैं वह साक्षात आप ही हैं। भाव यह कि जितने भी अन्य प्रजापति हैं उनके भी प्रजापति आप ही हैं। “ ऋषय मनवो देवाः मनु पुत्रा महौजसः। कलाः सर्वे हरे रेव स प्रजापतयस्तथा ” इस श्रीमद्भागवत के वचनानुसार सभी प्रजापति आप ही के कलावतार हैं।

Vishal pandey

यहां पर यह शंका हो सकती है कि उपर्युक्त श्रीमद्रामायण के वचन में रावण के मारने के लिये श्रीलक्ष्मी और श्रीमद्विष्णु के ही मनुष्य शरीर में प्रवेश करने की बात सुस्पष्ट लिखी है। और "राघवत्वेभवेत्सीता रुक्मिणी कृष्ण जन्मनि" विष्णुपुराण के इस वचन में भी सुस्पष्ट रीति से श्री सीता राम को श्रीलक्ष्मी विष्णु का ही अवतार लिखा है फिर श्री सीता राम के ही श्री लक्ष्मी विष्णु, कैसे अवतार हो सकते हैं !

समाधान यह कि श्री ब्रह्मा जी ने स्वधाम प्रवेश के समय श्रीराम भगवान को कहा है कि हे श्रीराम ! यामिच्छसि महाबाहो "तातनुं प्रविशस्विकाम। वैष्णवीं वामहातेजा यद्वाकशं सनातनम्" अर्थात विष्णु रूप में अथवा आकाश (ब्रह्म) शरीर में अर्थात इन दोनों में से किसी भी अपने एक रूप में अपनी इच्छा के अनुसार न कि हमारे कथन के अनुसार आप प्रवेश कर जायें। भाव यह कि आप विष्णु हो कर रहें अथवा तो आकाश अर्थात इसी श्रीराम स्वरूप से ही रहें यह आपकी अपनी इच्छा है न कि हमारी आज्ञा। हम तो प्रार्थना ही करते हैं। यहां पर आकाश शब्द से परब्रह्म ही का गुण है न कि भूताकाश का। और परब्रह्म से श्रीराम का ही ग्रहण है न कि राम से भिन्न का। क्योंकि पूर्व वचन में श्रीराम को ब्रह्मा जी आकाश कह चुके हैं और विष्णु और ब्रह्म दोनों को राम का शरीर कह चुके हैं। एक शंका और भी है जैसे कि "एतस्मिन्नंतरे विष्णु रूपयातो महाद्युतिः त्वांनियोक्ष्यामहे विष्णो लोकानां हितकाम्यया – विष्णो पुत्रत्वामागच्छ कृत्वात्मानं चतुर्विधम्– अवध्यं दैवतैर्विष्णो समरे जहिरावणम् – एवं दत्वा वरं देवो देवानां विष्णुरात्मवान् इत्यादिक अनेक वचनों में चतुर्भुज वाचक विष्णु शब्द की क्या गति होगी ?

समाधान यह कि "ततः पिता महोवाणीमंत्तरिक्षादभाषता

आगच्छ विष्णोभद्रंते दिष्ट्या प्राप्तोसि राघव" श्री रामायण के उत्तर काण्डीय इस बचन में ब्रह्मा जी ने श्रीराम को भी राघव संबोधन के साथ साथ विष्णु संबोधन से भी पुकारा है, अर्थात द्विभुज श्रीराम में भी विष्णु शब्द, यौगिक रीति से रूढ है इसमें किसी को विप्रतिपत्ति (आपत्ति) नहीं होनी चाहिए। इसी प्रकार पद्मपुराण में भी दो बार श्रीराम की विष्णु संज्ञा का समर्थन मिलता है। जैसे कि "विष्णुमासि स मुत्पन्नो विष्णु स्तेनाभिधीयते अर्थात विष्णु मास (चैत्र मास) में प्रकट होने के कारण श्रीराम का नाम भी विष्णु है। इसी प्रकार "वरुणार्थं समुत्पन्नो विष्णु स्तेनाभिधीयते अर्थात यज्ञोवै विष्णु" इस श्रुति के अनुसार विष्णु नाम यज्ञ का होने के कारण उस विष्णु अर्थात यज्ञीयचरू लक्षण में प्रकट होने के कारण श्रीराम का नाम भी विष्णु है। इस रीति से पद्मपुराण के अनुसार भी श्रीराम का नाम विष्णु है।

इसके अतिरिक्त वै वेष्टि सकलं जगत् इस व्युत्पत्ति के अनुसार व्यापक का ही नाम विष्णु ठहरता है तब "रमते सर्व भूतेषु स्थावरेषु चरेषु च। अंतरात्म स्वरूपेण यच्च रामेति कथ्यते" इस स्कन्दपुराणीय व्युत्पत्ति के अनुसार श्रीराम भी सर्व चराचर भूतों में व्यापक ही हैं। क्योंकि जो सर्व भूतप्राणियों में रमण करता है वही व्यापक होता है। इस प्रकार श्रीराम भी सर्वत्र व्यापक हैं। तब श्रीराम का भी नाम विष्णु है। ऐसी दशा में श्रीमद्रामायण के सभी पूर्वोक्त वचनों में विष्णु शब्द का अर्थ राम ही हो सकता है।

यदि कहा जाए कि उन उपर्युक्त वचनों में गरूडारूढ होने के कारण विष्णु शब्द चतुर्भुज का ही वाचक माना जा सकता है द्विभुज श्रीराम का नहीं।

इसका समाधान यह कि "अहं सखाते काकुत्स्थ" इस

गरुडोक्ति के अनुसार श्रीराम भी गरुडारूढ ही माने जा सकते हैं। ऐसी दशा में भी वह पूर्वोक्त सभी वचनों में कहा हुआ विष्णु शब्द श्रीराम का ही वाचक है चतुर्भुज विष्णु का नहीं। अब यदि फिर कहा जाय कि यह गड़ बड़ क्यों?

समाधान यह कि यह गड़बड़, श्रीराम के परत्व को छिपाने के लिये ही शास्त्रों ने की है अथवा ऋषिओं ने की है। इस लिये कि "परोक्षवादाऋषयः परोक्षं च ममप्रियम्" अर्थात ऋषि लोग सदा से परोक्ष ही अर्थात अस्पष्ट ही बोलते हैं स्पष्ट नहीं। और परोक्ष बोलना अर्थात अस्पष्ट बोलना ही श्रीराम को प्रिय है। इस लिये यह गड़बड़ी ऋषियों ने करदी है। कहीं कुछ कह दिया है और कहीं कुछ कह दिया है। और इसी से हमारी निपुणता की परीक्षा भी ली है ऋषिओं ने।

इस प्रकार उपर्युक्त शास्त्र पर्यालोचन से श्रीमद्दाशरथि राम ही परंब्रह्म और स्वयं भगवान और सभी अवतारों के मूल कंद तथा परमात्मा, बिना किसी आपत्ति के सिद्ध होते हैं और इसी प्रकार श्रीसीता भगवती भी शास्त्रों का विचार मंथन करने से लक्ष्मी से परसिद्ध होती है। श्रीराम को छोड़ कर अन्य सभी देवताओं की तथा सभी गौर्यादि शक्तिओं की मूलकंद ही सिद्ध होती हैं। जैसा कि—

सद्यस्ते सिद्धिमायांति ये सीतापदचिंतकाः।
यस्याः संकल्प मात्रेण सृष्टिस्थितिलयादिका॥

भवंति जगतां नित्यं व्यापारा ऐश्वरा अमी।
सीता मृत्युः सुधाचेयं तपत्येषा च वर्षति॥

स्वर्गो मोक्षस्तपो योगो दानं च तव जानकी।

ब्रह्माणं शिवमन्यांश्च लोकपालान्मदात्मकान् ।
करोत्येपाऽकरोत्येव नान्या सीता तव प्रिया ॥

पद्म पुराण के इस वचनों में श्रीसीता भगवती के चरण कमलों के स्मरण से अथवा तो सीता इन दो अक्षरों के पद के स्मरण से अर्थात मानसी जप से सब सिद्धिओं की शीघ्र प्राप्ति का तथा श्री सीता भगवती के संकल्प मात्र से असंख्य जगतों की उत्पति स्थितिलयादिक ईश्वरीय व्यापारों के होते रहने का अतीव स्पष्ट वर्णन मिलता है। तथा स्वर्ग और मोक्ष तक देने की श्री सीता की शक्ति का वर्णन भी स्पष्ट मिलना है। इसके अतिरिक्त ब्रह्मा और शिव तक की उत्पत्ति आदि करना भी श्री सीता भगवती की इच्छा के आधीन ही लिखा मिलता है। ऐसी दशा में श्री भगवद्दास जी का कहना कि जासु अंश उपजहिं गुण खाली अगणित उमारमा ब्रह्माणी इस चौपाई के अनुसार श्री सीता भगवती के अंश से उमारमा ब्रह्माणी की उत्पत्ति शास्त्र संस्मत नहीं और वैष्णव सिद्धान्त नहीं– यह बात सर्वथा मिथ्या ही है उपर्युक्त शास्त्र के विरुद्ध ही है, जो कि सबके सामने है। श्री सीता उपनिषद में भी ऐसा ही लिखा मिलता है। वह यह कि- मूल प्रकृतिरूप त्वात्सा सीता प्रकृतिर्मता प्रणव प्रकृतिरूप त्वात्सीता प्रकृति रूच्यते। श्रीराम सान्निध्य वशाज्जगदानन्दकारिणी उत्पत्ति स्थिति संहार कारिणी सर्व देहिनाम्।

सा सीता सर्व वेदमयी सर्व देवमयी सर्व लोकमयी सर्व धर्ममयी सर्वाधारमयी महालक्ष्मीर्देवेशस्य भिन्नाभिन्न रूपेत्यादि अर्थात जड़ प्रकृति का मूल अर्थात प्रकृति का संचालन करने के कारण श्री सीता भी प्रकृति ही मानी जा सकती हैं। दोनों में भेद इतना है जो प्रकृति संचालित होती है वह जड़ प्रकृति है। और श्री सीता जी उसका संचालन करती हैं, अतः वह चेतन

प्रकृति हैं। और प्रकृति का मूल होने से मूल प्रकृति हैं इस के अतिरिक्त श्री सीता जी प्रणव की अर्थात ओंकार की भी प्रकृति (कारण) हैं इसी लिये श्री सीता जी मूल प्रकृति कही जाती हैं।

श्रीराम भगवान की समीपता के कारण श्री सीता जी भक्तों को आनन्दित करने वाली हैं। और जगत की उत्पत्ति स्थिति तथा संहार करने वाली भी हैं।

वही उपर्युक्त श्री सीता जी सर्व वेदमती हैं अर्थात सर्व वेद प्रतिपाद्या हैं। और वही श्री सीता जी सर्व देवमयी हैं अर्थात सर्व देव कारण स्वरूपा हैं। और वही श्री सीता जी सर्व लोक-मयी हैं अर्थात सर्व लोकों में सूत के समान ओतप्रोत हैं। सर्व व्यापक हैं। और वही श्री सीता जी सर्व धर्ममयी हैं अर्थात सर्व धर्मस्वरूपा हैं सर्व धर्मों की प्राणभूता हैं। और वही श्री सीता जी सर्वाधारमयी हैं अर्थात सभी आधारों का भी आधार हैं। जैसे कि पृथ्वी हमारा आधार है किन्तु उस पृथ्वी का भी आधार श्री सीताभगवती ही हैं। इसी प्रकार कार्य कारणमयी अर्थात कार्यों का कारण और सभी कारणों का भी कारण श्री सीता जी ही हैं। और वही श्री सीता जी महालक्ष्मी भी हैं अर्थात श्री लक्ष्मी जी से भी बड़ी लक्ष्मी हैं। जैसे कि श्रीराम महाविष्णु हैं। और श्री सीता जी देवेश (श्रीराम) से स्वरूपत: भिन्न हैं और फिर तत्वत: अभिन्न भी हैं। अर्थात श्री सीता जी भी ईश्वरी हैं श्रीराम स्वरूपा ही हैं। इसी लिये "ऋते मायां विशालाक्षी तत्वां केचित्प्रजानते" अर्थात श्री सीता के बिना कोई भी तत्वत आपको नहीं जान सकता है इस बचन के अनु-सार श्री सीता जी के बिना श्रीराम के जानने की अगम्यता कही है। इसी लिये यह ठीक ही है कि जैसे श्रीमन्नारायण भगवान श्री राम भगवान के आद्यावतार हैं इसी प्रकार श्री लक्ष्मी जी भी श्री सीता भगवती का आद्यावतारभूता ही हैं ऐसी दशा में

श्री भूदेवी जी तथा श्री नीलादेवी जी भी श्री सीता जी का क्रमशः द्वितीयावतारभूता तथा तृतीयावतार भूता ही हैं। इसी लिये "श्रियाः श्रीश्चभवेदग्र्या" तथा "श्रियाः श्रींभर्तृ वत्सलाम्" श्रीमद्रामायण के इन दोनों बचनों में एक स्थान में श्री सीता भगवती को श्री लक्ष्मी की अग्र्या अर्थात पूर्वजा भी कहा है और श्री की भी श्री कहा है। तथा दूसरे स्थान में तथा पहले स्थान में श्री की भी श्री कहा है जो कि सर्वथा संगत ही है।

यहां एक शंका अवश्य हो सकती है कि जब श्री विष्णु पुराण के "राघवत्वेभवेत्सीतारुक्मिणी कृष्ण जन्मनि" इस वचन के अनुसार श्री सीता जी तो श्री लक्ष्मी के ही अवतार सिद्ध होती हैं, ऐसी दशा में श्री लक्ष्मी को ही श्री सीता का अवतार कहना कैसे सम्भव हो सकता है?

समाधान यह कि श्रुति और पुराण का जब विरोध होने लगे, तब श्रुति ही बलवान होती है। ऐसी दशा में श्रुति के अनुसार श्री सीता जी को ही सर्व कार्यकारण रूप होने के कारण तथा श्री सीता जी की इच्छा शक्ति के ही श्री भूलीला प्रभृति को तीन रूप कहने के कारण श्री लक्ष्मी को ही श्री सीता जी का अवतार कहा और माना जा सकता है, न कि श्री सीता जी को ही श्री लक्ष्मी का अवतार। परन्तु यह गड़बड़ी क्यों?

समाधान यह कि 'परोक्ष वादाऋषयः परोक्षं च ममप्रियम्' इस वचन के अनुसार ऋषिलोग अस्पष्ट ही वर्णन करते हैं और स्पष्ट वर्णन ही श्रीराम को प्रिय भी होता है। इसी लिये ही यह अनर्गलता (गड़बड़ी) मची हुई है।

तदिदं नः कृतं कार्यं त्वयाधर्मभृतांवर !
निहतो रावणो राम प्रहृष्टो दिवमाक्रम ॥ ३०

श्रीराम रहस्य भाष्यम्

तदिति तच्छब्दः पूर्वं परामृशति-तेन यत्कार्यं रावणवधरूपं विष्णु नारायणेन वापि नतु नशक्यतेस्म तत्कार्यं नोऽस्माकं भवता कृतमेव संपादितमेव। धर्माणि बिभृर्तीति धर्मभृतस्तेषां वरस्त-त्संबुद्धौ हे धर्मभृतांवर! इदानीं दिवं निजंदिव्यं साकेतलोक माक्रम शीघ्र मागच्छेतिभावः कार्य सिद्धयैव प्रहृष्टत्वं सर्वस्य भवति। एवं च रावणबधेन देवतानामस्माकं प्रहृष्टतया भवानपि प्रहृष्ट एव। अत्र प्रार्थनायां लोट्नतुविधौ।

रहस्य प्रकाशिका

ब्रह्मा जी कहते हैं हे श्रीराम! जो रावण वधरूप कार्य श्री-मन्नारायण वा श्रीमद्विष्णु नहीं कर सके वह कार्य आपने किया है। इस लिये हम देवता लोग बड़े ही प्रसन्न हैं। हमारी प्रसन्नता से आप भी प्रसन्न हैं। और अब आप अपने सांकेत (श्री अयोध्या) में आइये।

अमोघं बलवीर्यंते ह्यमोघस्ते पराक्रमः।
अमोघं दर्शनं राम नचमोघस्तवस्तवः॥ ३१

श्रीराम रहस्य भाष्यम्

अमोघमिति ब्रह्मा ब्रवीति हे श्रीराम! यत्र श्रीमद्विष्णोः श्रीमन्नारायणस्य बलवीर्य पराक्रमा अमोघा निष्फला जातास्त-त्रतवभवत एव बलवीर्य पराक्रमाऽमोघा अव्याहताः सफला संजाताः। बलवीर्य पराक्रमाः पर्यायवाचका अपि शारीरिक संकल्पजशस्त्रास्त्रजन्य बलाभिप्रायेणैवप्रयुक्ताः न पुनरुक्तिभाजः एवं च भवतोदर्शन मप्यमोघमेव सफलमेव। अतएवायोध्यायाः प्राणिमात्राणां मुक्तिः श्रीरामलोकप्राप्तिश्च। अतएव "यश्च

रामं न पश्यतिनोरामं च रामो न पश्यति । स एव निन्दितो लोके स्वात्माप्येनं विगर्हति" इति वचनानुसारेण स्वात्मापि श्रीरामा दृष्टं श्रीरामा दर्शनकारिणं च जनंविगर्हति धिक्करोतीत्यर्थः । राम दर्शनाभावान्मुक्तेरप्यभावात् । प्रमाणं चात्र 'यदापश्यः पश्यते रुक्मवर्णं कर्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम् । तदाविद्वान्पुण्य पापे विधूय निरंजनः परमं साम्यमुपैत्ति । एवं च 'वेदाहमेत्त' पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् । तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नांयः पंथाविद्यते अयनायेति श्रुति भ्यांम्यांतत्रान्वयव्यति रेक प्रमाणात् । अत्र श्रुतौविद्धातोर्ज्ञानार्थत्वेपि तत्र चाक्षुषप्रत्यक्ष्य स्यैव प्रधानार्थत्वेन तदर्थवत्त्वात् । श्रावण प्रत्यक्षस्य सामान्य ज्ञानत्वात्तदपेक्षया चाक्षुषप्रत्यक्षस्य विशेष ज्ञानत्वेन प्रबलत्वात् नियमाश्चात्र पूर्वं श्रवणमात्रेण सामान्यतः जानात्तितस्तद्दर्शनं तत्प्रा-प्तिवेच्छति – ततोयतते, ततः प्रयतते–ततः पश्यति प्राप्नोतिवेति नियमेन विद्धातो जानातेर्वा चाक्षुष प्रत्यक्ष एव पूर्णार्थत्वेन् तदर्थ तत्वादितिदिक् ।

एवं च तवायंस्तवोप्यमोघ एव तव प्रसादा सादक एव येन त्वत्प्रसादेनास्यस्तोतुः सर्वदुःखानामन्त एव जायत पुनः संसृतौ ना पद्यते ।

रहस्य प्रकाशिका

ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे श्रीराम ! जिस रावण पर श्रीमद्-विष्णु के अथवा श्रीमन्नारायण के बलवीर्य पराक्रमादिक सभी सफल नहीं हो सके, उसी पर आपके बलवीर्य पराक्रमादिक सभी सफल हो गये। यद्यपि बलवीर्य और पराक्रम ये तीनों शब्द पर्याय वाचक ही हैं तथापि यहां पर बल शब्द से शारीरिक बल लेने से तथा वीर्य शब्द से संकल्प जन्य बल का ग्रहण करने से और पराक्रम शब्द से शास्त्रास्त्र जन्यबल का ग्रहण

करने से भिन्न भिन्न अर्थ होने के कारण पुनरुक्ति दोष नहीं आ सकता है।

इसी प्रकार आपके दर्शन भी अमोघ ही हैं सफल ही हैं। इसी लिए ही अयोध्या के प्राणीमात्र संसार चक्र से निकल कर श्रीराम धाम में पहुंच गये। लिखा भी है कि जिन्होंने श्रीराम के दर्शन नहीं किये और जिनको श्रीराम ने भी नहीं देखा उनकी इस लोक के लोग भी निन्दा करते हैं तथा उनकी आत्मा भी उनकी निन्दा ही करती रहती है। इस वचन के अनुसार वह श्रीराम दर्शन से वञ्चित और राम दृष्टि से बंचित पुरुष इस लोक में निन्दा का पात्र ही होता है उसकी आत्मा भी उसकी निन्दा ही करती है। उसे बारम्बार धिक्कारती ही रहती है। इस लिये कि श्रीराम दर्शन के बिना मनुष्य की मुक्ति ही नहीं हो सकती है। यदापश्यः पश्यते रुक्मवर्णं कर्तारमीशं पुरुषं महान्तं तदाविद्वान्पुण्यपापे विधूय निरंजनः परमं साम्यमुपैति– अर्थात जब यह जीवात्मा जगत के आदिकर्त्ता के कर्ता ईश्वर महापुरुष श्रीराम को आंखों से देख लेता है तब ही वह पुण्य और पापों को छोड़कर माया से मुक्त होकर श्रीराम की समानता को प्राप्त हो जाता है यह श्रुति कहती है। अर्थात श्री राम के दर्शन से मुक्ति मिलना बताती है। इसी प्रकार "वेदाह-मेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्। तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पंथाविद्यते ह्ययनाय"। यह श्रुति भी अन्वय व्यतिरेक श्री राम दर्शन से ही मुक्ति मिलना बताती है, इस श्रुति में विद् धातु का अर्थ आंख से देखना ही है। क्योंकि छहों ज्ञानों में आंखों से होने वाला ज्ञान ही विशेष होने के कारण मुख्य है। इस के बिना श्रवण से जो ज्ञान होता है वह सामान्य ज्ञान ही कहलाता है। सामान्य ज्ञान से विशेष ज्ञान बलवान होता है। इस लिये यहां भी विद् धातु का अर्थ

आंख से देखना ही ठीक है। इसका नियम यह है, जैसा कि-जानाति इच्छतियतते प्रयतते ततपश्यत्ति। अर्थात पहले मनुष्य को श्रवण ज्ञान होता है जो कि सामान्य ज्ञान कहाता है। तत्पश्चात् उसके दर्शन की बात उसकी प्राप्ति की इच्छा होती है। उसके अनन्तर मनुष्य अपनी उस इच्छा की पूर्ति के लिये सामान्य यत्न करता है। उससे इच्छा पूर्ति न होने पर मनुष्य अधिक यत्न करता है, तब कहीं दर्शन होता है। इस प्रकार दर्शन होने पर ही विद्धातु के अर्थ की सार्थकता वा पूर्णता होती है यह नियम ही है। अतः विद् धातु का अर्थ श्रीराम का साक्षात्कार ही है।

इसी प्रकार आपका यह स्तव (स्तुति) भी अमोघ ही है। अर्थात आपकी प्रसन्नता करने वाला है। जब आप प्रसन्न होते हैं तो फिर जीव के जन्म मरण और उसके बीच के भी सभी दुःख नष्ट हो जाते हैं। फिर कभी वह जीवात्मा इस संसार में नहीं आता है।

ये त्वां देवं ध्रुवं भक्ता पुराणं पुरुषोतमम्।
प्राप्नुवंति सदा कामानिहलोके परत्रच॥ ३१

श्रीराम रहस्य भाष्यम्

येत्वामिति–हे परंतप! ये भक्ताः जीवात्मात इत्यर्थः। यच्छब्द प्रयोगेन स्त्रीशूद्रादीनामपि ग्रहणं तेन सर्वेषामत्राधिकारः। त्वां श्रीरामं पुराणमनाद्यं तं पुरुषोत्तमं पुरुषेषु विष्णु कृष्ण नारायणादिषूत्तमं श्रेष्ठं, दीव्यति क्रीड़ति योऽनेकावतारैः सदेवः श्रीरामस्तंदाशरथिं देवं सदा भक्ता भजन्तिते सदा इहलोके परत्र परलोकेपि सर्वान्कामान्प्राप्नुवंति।

ब्रह्मलोकभोगभोगात्तंतरं श्रीराममेव प्राप्नुवंतीत्यर्थः। अयमेव परलोकस्य कामः। अत्र सर्वोत्तम श्लोक पुरुषेषु श्रीरामस्य श्रेष्ठ्यं नमो ब्रह्मण्यदेवाय रामायाकुंठमेधसे। उत्तमश्लोकधुर्याय न्यस्तदण्डार्पितात्मने—इति श्रीमद्भागवत वचनेनापि समर्थितमेव। तथैव "राम रामेति रामेति रमेरामे मनोरमे। सहस्रनामतातुल्यं राम नाम वरानने" इति वचनात्पद्म महापुराणेनापि समर्थितम्। सर्वेषुमन्त्रवर्येषु श्रेष्ठं वैष्णवमुच्यते। गाणपत्येषु सौरेषु शैव शक्तेष्वमीष्टदम्। वैष्णवेष्वपि मन्त्रेषु राममन्त्रा फलाधिकाः। गाणपत्यादि मन्त्रेभ्यः कोटिकोटि गुणाधिका इति नारद पुराणेनापि समर्थितम्। न रामादधिकं किंचित्पठनं जगतितले इति स्कान्दपुराणेनापि समर्थितम्। सहस्र नामतातुल्यमित्यत्र ग्राम जनबन्धुभ्यस्तलित्यनेन सूत्रेण ग्रामाणां समूहो ग्रामतेव तलू प्रत्ययस्तेन सहस्रनाम्नां समूहः सहस्रनामतातयातुल्यं राम नामास्ति। हे वरानने! हे मनोरमे! तस्मात्कारणादहं तस्मिन्नामे (रामनाम्नि) रमे—सर्वाणिनामान्तराणि विहाय रामेतिद्व्यक्षरं नामैव जपे इत्यर्थः। अत्र रामरामेति रामेति—इति त्रिरुक्तिस्तु जपानुकरणं, न तु इयं सहस्रनामता—तुल्या किन्तु एक बारमेव रामेतिनाम्न उच्चारणं सहस्रनाम्नां समूहेन तुल्यमित्यन्वयः। ननु इयं त्रिरुक्तिरेव सहस्रनामतातुल्येतिचेन्न! "जपतः सर्ववेदांश्च सर्व मन्त्रांश्च पार्वति। तस्मात्कोटि गुणं पुण्यं रामनाम्नैवलभ्यते" इति पाद्मवचनान्तरे रामनाम्नैवेत्येक वचन प्रयोगेन रामनाम्न एक वारोच्चारणस्य सर्वमन्त्रजपात्सर्ववेदपाठात्कोटि गुणाधिक फलदत्ववर्णनात्। त्रिरुक्तेः सहस्रनामतयातुल्यत्वस्यनिरर्थकत्वात् अतएवैकवारमेव रामनाम्न उच्चारणं सहस्रनामतयातुल्यमेवेति शास्त्राभिप्रायः श्रीशंकराभिप्रायश्च।

इममार्षस्तवं नित्यमितिहासं पुरातनम्।
येनराः कीर्तयिष्यंति नास्ति तेषां पराभवः॥ ३२

इममिति – इदं ब्रह्म प्रोक्तमार्षस्तवं श्रीरामस्तवमित्यर्थः तथैवेतिहासं श्रीमद्रामायणं च पुरातनमेव तेन श्रीमद्दाशरथी रामोपि पुरातन एव। रामस्य पुरातनमंतरात्तर्हितिहासस्य रामस्तवस्य च पुरातनत्वमसंभमेव तेन श्रीरामस्य त्रेताभवत्वं बाधितमेव। इत्थं च इमंरामस्तवं येनराः कीर्तयिष्यंति पठिष्यंति-तेषां जन्म-मरणरूपोपराभवोनास्त्येव–अत्रेदंबोध्यं–यद्यपि श्रीमद् विष्णु कृष्ण नारायणादीनां तत्वत ऐक्यमेवा भेदाभाव एव। सर्वेषां पुरुषवाचकत्वंमपि समानमेव। सर्देषामेतेषां ब्रह्मेति विशेषणं-मपि समानमेव। तेन नारायणादयः सर्वे।पेब्रह्मैवनात्र संदेहावसरः। तथापि नामरूपलीला धामादीनां भेदेनभेदोपि सांसिद्धिक एव। संसिद्धे भेदेतेषु परं (मूलं) ब्रह्म कतमत् सर्वस्य मूलकन्दः कः सर्वेभ्यः प्राक्क इति प्रश्नोजीवित एव तद्विनाशोप्यावश्यक एव। तदर्थमेवात्र राममुद्दिश्य आदि कर्तृत्वं स्वयं प्रभुत्वं लोकानामादावंते रामस्यैवा वशिष्टत्वं जगतः रामशरीरत्वं सर्वत्र रामस्य व्यापकत्वं रामान्तर्यामित्वं सर्वेषां रामावतारत्वमेव सर्वेषां राम मूलकत्वं ब्रह्मादिभिः प्रबोधितम्। एतदेवान्यत्राप्दृष्ट्वा त्रार्षस्तवानुसारिभिर्वाक्यान्तरैर्मया समर्थितम्। अत एवेदं भाष्यमेव। इति श्री वाल्मीकी श्रीमद्रामायणे लंका काण्डे ब्रह्मस्तुति वर्णनं नाम एक शततमोध्यायः।

अरपर्षि छन्दः प्रभृति वर्णनम्

अस्य श्रीमद्रामस्तवस्य ब्रह्मादयः ऋषयः अनुष्टुप् छन्दः श्री रामः परमात्मा देवतात्वमेवादि कर्तेति बीजम्–त्वमेव स्वयं प्रभुरिति शक्तिः अहंते हृदयं राम इति हृदयम्-एक शृङ्गो वराहस्त्वं इति कीलकम्–त्वमेवाक्षरं ब्रह्मेत्यस्त्रम्। लोकानां त्वं परोधर्म इति कवचम्–पद्मनाभोरणांतकृदिति परमोमंत्रः श्रीराम प्रीतये ह्यार्षस्तव पाठेर्विनयोगः।

श्रीरामदेवतायै नमोहृदि । आदिकर्तेति बीजाय नमोगुह्ये । स्वयं प्रभुरिति शक्तये नमः मः पादयोः । एक श्रृङ्गोवराहस्त्वमिति कीलकाय नमः सर्वाङ्गे । अथकरन्यासः । रामायांगुष्ठाभ्यानमः । रामभद्रायतर्जनीभ्यांनमः । रामचन्द्राय मध्यमाभ्यां नमः । वेधसे अनामिकाभ्यां नमः । रघुनाथाय नाथायकनिष्ठिकाभ्यां नमः । सीताया पतयेकरतल करपृष्ठाभ्या नमः ।

अथ हृदयादिन्यास

रामाय हृदयाय नमः । रामभद्रायशिरसे स्वाहा । रामचंद्राय शिखायै वषट् । वेधसे कवचायहुम । रघुनाथाय नाथाय नेत्रयाय वौषट् सीतायाःपत्नये नमः अस्त्रायफट् इतिन्यासान् कृत्वा तदनन्तरः पाठारम्भः कार्यः ।

वन्दे राममधोक्षजंसुरगुरुं वन्दे जगत्स्वामिनम् ।
वन्दे शारदपूर्ण चन्द्र वदनं वन्दे शिवाराधितम् ॥
वन्दे भक्त जनाश्रयं शरणदं वन्दे शरण्यं परम् ।
वन्दे ब्रह्म परात्परं रघुवरं वन्दे नृपाणां पतिम् ॥

* श्रीरामार्पणमस्तु *

❀ अभ्युदय वर्द्धकं श्रीरामस्तवम् ❀

महादेव उवाचः—

शृणु सुन्दरि ! वक्ष्यामि स्तोत्रं चाभ्युदयं ततः।
यं कृत्वामुच्यते पापी ब्रह्महा नात्र संसयः ॥ १ ॥
धातावै नारदं प्राह तदहंतु ब्रवीमिते।
तमुवाच ततो देवः स्वयंभूरमित द्युतिः ॥ २ ॥
प्रगृह्य रुचिरं बाहूं स्मारयेच्चोर्ध्वं देहिकम्।
भवान्नारायणो श्रीमान देवश्चक्रधरो हरि ॥ ३ ॥
शार्ङ्गधारी हृषीकेश पुराणः पुरुषोत्तमः।
अजितः खड्गभृज्जिष्णुः कृष्णश्चैव सनातनः ॥ ४ ॥
एक शृङ्गो वराहस्त्वं भूतभव्यभवात्मकः।
अक्षरं ब्रह्म सत्यं त्वमादौ चान्ते च राघव ॥ ५ ॥
लोकानां त्वं परोधर्मो विष्वक्सेनश्चतुर्भुजः।
सेनीनी रक्षणस्त्वं च वैकुंठस्त्वं जगत्प्रभुः ॥ ६ ॥
प्रभवश्चाव्ययस्त्वं च ह्युपेन्द्रो मधु सूदनः।
पृश्निगर्भो धृतार्चिस्त्वं पद्मनाभोरणान्तकृत् ॥ ७ ॥
शरण्यं शरणं च त्वामाहुः सेन्द्रा महर्षयः ॥ ८ ॥
त्वं यज्ञस्त्वं वषट् कारस्त्वमोंकारः परंतपः।
शतधन्वा वसुपूर्वं वसूनां त्वं प्रजापतिः ॥ ९ ॥
त्रयाणामपि लोकानामादि कर्त्ता स्वयं प्रभुः।
रुद्राणामष्टमो रुद्रः साध्यानामपि पंचमः ॥ १० ॥
अश्विनौ चापि कर्णौते सूर्यचन्द्रौ च चक्षुषी।
अंते चादौ च मध्ये च दृश्यसे त्वं परंतपः ॥ ११ ॥
प्रभवो निधनं चास्य न विदुः को भवानिति।
दृश्यसे सर्वलोकेषु गो-ब्राह्मणे षु च ॥ १२ ॥

दिक्षु सर्वासु गगनेपर्वतेषु गुहासु च ।
सहस्र नयनः श्रीमान् शत शीर्षः सहस्रपात् ॥ १३ ॥
त्वं धारयसि भूतानि वसुधां च सपर्वताम् ।
अन्तः पृथिव्याः सलिले सर्वसत्वमहोरगः ॥ १४ ॥
त्रींल्लोकान्धारयन्नासे देवगंधर्वदानवान् ।
अहं ते हृदयं राम जिह्वा देवी सरस्वती ॥ १५ ॥
देवा रोमाणि गात्रेषु निर्मितास्ते स्व मायया ।
निमिषस्तेस्मृतारात्रिरुन्मेषो दिवसस्तथा ॥ १६ ॥
संस्कारस्तेऽभवन्वेदा न तदस्ति त्वाया विना ।
जगत्सर्वं शरीरं ते स्थैर्यं ते वसुधा तलम् ॥ १७ ॥
अग्निः कोपः प्रसादस्ते शेषः श्रीमांश्च लक्ष्मणः ।
त्वया लोकस्त्रयः क्रान्ताः पुराणैर्विक्रमैस्त्रिभिः ॥ १८ ॥
त्वयेन्द्रश्च कृतो राजा बलिर्बद्धो महासुरः ।
लोकान्संहृत्य कालस्त्वं निवेश्यात्मनि केवलम् ॥ १९ ॥
करोष्ये कार्णं वं घोरं दृश्यादृश्ये च नान्यथा ।
त्वया सिंहवपुः कृत्वा परमं दिव्यमुत्तमम् ॥ २० ॥
भयदः सर्वभूतानां हिरण्यकशिपुर्हतः ।
त्वमश्व वदनो भूत्वा पाताल लोकमास्थितः ॥ २१ ॥
संहृतं परमं हव्यं रहस्यंवै पुनः पुनः ।
यत्परं श्रूयते ज्योतिः यत्परं श्रूयते परः ॥ २२ ॥
यत्परं परतश्चैव परमात्मेति कथ्यते ।
परो मंत्रः परं तेजस्त्वमेव हि गद्यसे ॥ २३ ॥
हव्यं कव्यं पवित्रं प्राप्तिः स्वर्गापवर्गयोः ।
स्थित्युत्पत्तिविनाशांस्ते त्वामाहुः प्रकृतेः परम् ॥ २४ ॥

यज्ञश्च यजमानश्च होताध्वर्यु रेव च ।
भोक्ता यज्ञ फलानां त्वं त्वं वै वेदैश्च गीयसे ॥ २५ ॥

सीता लक्ष्मीर्भवान्विष्णुर्देवः कृष्णः प्रजापतिः ।
वधार्थं रावणस्य त्वं प्रविष्टो मानुषीं तनुम् ॥ २६ ॥

तदिदं त्वया कार्यं कृतं धर्मभृतांवर ।
निहतो रावणो राम प्रहृष्टादेवताः गणाः ॥ २७ ॥

अमोघं देव वीर्यंते न ते मोघ पराक्रमः ।
अमोघ दर्शनं राम न च मोघस्तव स्तवः ॥ २८ ॥

अमोघास्ते भविष्यंति भक्तिमंतोनराभुवि ।
ये च त्वां देव संभक्ताः पुराणं पुरुषोत्तमम् ॥ २९ ॥

इममार्षस्तवं पुण्यमितिहासं पुरातनम् ।
ये नरः कीर्तयिष्यंति नास्ति तेषां परा भवः ॥ ३० ॥

स्तोत्राणां प्रवरं स्तोत्रं राघवस्य महात्मनः ।
त्रिकाले तु पठन्मुक्तो महापातकवानपि ॥ ३१ ॥

संध्याकाले द्विजश्रेष्ठैः श्राद्धकाले विशेषतः ।
पठनीयं प्रयत्नेन भक्ति भावेन चेतसा ॥ ३२ ॥

इदं गोप्यं हि परमं नाख्येय कर्हिचित्कचित् ।
पठनान्मुक्तिमाप्नोति सात्वतः स भवेध्रुवम् ॥ ३३ ॥

प्रथमं पिंडपूजान्ते ब्राह्मणैः सुर सत्तमैः ।
पठितव्यमिदं स्तोत्रं श्राद्धमक्षयमाप्नुयात् ॥ ३४ ॥

इदं पवित्रं परमं जनानामुक्ति दायकम् ।
लिखित्वा वै गृहे यस्तु धारयेत्सुसमाधिना ॥ ३५ ॥

आयुः श्रीश्च बलं तस्य वृद्धिं याति दिने दिने ।
लिखित्वा ब्राह्मणोदद्याद्धी मान्योवै कदाचन ॥ ३६ ॥

विमुक्ताः पूर्वजास्तस्य यांति विष्णोः परं पदम् ।
चतुर्णां चैव वेदनां पाठे चैव तु यत्फलम् ॥ ३७ ॥
समवाप्नोति त्वरितं नरः स्तोत्रं पठन् जपन् ।
विधिना भक्तिभावेन पूर्णं भवति नान्यथा ॥ ३८ ॥
धृत्वा वै शंख चक्रादि ब्राह्मणो वेद तत्परः (पारगः) ।
श्राद्धकाले महादेवि अक्षयं तद्भवेध्रुवम् ॥ ३९ ॥
कंठ यथाक्ष मालां च शंख चक्रादि धारणम् ।
ततः श्राद्धं प्रकुर्वीत इदं स्तोत्रं पठन् जपन् ॥ ४० ॥
अतो भक्तिमता पुन्सा पठनीयं प्रयत्नतः ।
पठनात्सर्वमाप्नोति सनरः सुखमेधते ॥ ४१ ॥
कथमिह पराभवं व्रजेयुः पुरुषवरा पुरुषोत्तमे हि भक्ताः ।
नहि जगति रघुपति प्रियाणां त्रिदश इहास्ति वरदो विशिष्टः ॥४२

स्तोत्रं सम्पूर्णम् ५७६ वां अध्याय ।

❁ श्रीराम स्तोत्रम् ❁

* महादेव उवाच *

परव्योम्नि यथालीनो दैवतैः कमला पतिः ।
तथा नृपवरः श्रीमान् साकेते शुशुभे तथा ॥ १ ॥
इन्दीवरदल श्यामं पद्मपत्रनिभेक्षणम् ।
आजानु बाहुं काकुत्स्थं पीत वस्त्र वरं हरिम् ॥ २ ॥
कम्बुग्रीवं महोरस्कं विचित्राभरणैर्युत्तम् ।
देव्या सहसमासीनमभिषिक्तं रघूत्तमम् ॥ ३ ॥
बिमानस्थाः सुरगणाः हर्ष निर्भर मानसाः ।
तुष्ठुवुर्जयशब्देन गंधर्वाप्सरसां गणाः ॥ ४ ॥

अभिषिक्तस्ततो रामो वसिष्ठादिभिर्महर्षिभिः।
शुशुभे सीतया देव्या नारायण इव श्रिया॥ ५॥

अभितिमर्त्य तयारूपमुपमातीतमुल्बणम्।
दृष्ट्वा तुष्टाव हृष्टात्मा शंकरो हृष्टमानसः॥ ६॥

कृतांजलि पुटोभूत्वा सानंदोगद्गदाकुलः।
हर्षयन्सकलान्देवान्मुनीनपि च वानरान्॥ ७॥

नमोऽस्तु मूल प्रकृतये नित्याय परमात्मने।
सच्चिदानन्द रूपाय विश्व रूपाय वेध से॥ ८॥

नमो निरन्तरानन्द कंदमूलाय विष्णवे।
जगत्त्रय कृतानन्द मूर्तये दिव्य मूर्तये॥ ९॥

नमो ब्रह्मेन्द्र पूज्याय शंकराभयदाय च।
नमो विष्णु स्वरूपाय सर्व रूप नमो नमः॥ १०॥

उत्पत्ति स्थिति संहार कारिणे त्रिगुणात्मने।
नमोऽस्तु निर्गुणोपाधि स्वरूपाय महात्मने॥ ११॥

अनया विद्यया देव्या सीतयोपाधि कारिणे।
नमः पुम्प्रकृतिभ्यां च युवाभ्यां जगतां कृते। १२॥

जगतां मातृभ्यां पितृभ्यां जनन्यै राघवाय च।
नमः प्रपंच रूपिण्यै निष्प्रपंच स्वरूपिणे॥ १३॥

नमो ध्यान स्वरूपिण्यै योगिध्येयात्म मूर्तये।
परिणामा परिणामं रिक्ताभ्यां च नमोनमः॥ १४॥

कूटस्थ बीज रूपिण्यै सीतायै राघवाय च।
सीता लक्ष्मीर्भवान विष्णुः सीता गौरी भवाञ्छिवः। १५

सीता स्वयं हि सावित्री भवान्ब्रह्मा चतुर्मुखः।
सीताशची भवान् शक्रः सीता स्वाहा नलो भवान्। १६।

सीता संहारिणी देवी यम रूप धरो भवान्।
सीता हि सर्व सम्पतिः कुबेरस्त्वं रघूत्तम्॥ १७ ॥
सीतादेवी च रुद्राणी भवान्रुद्रोमहाबलः।
सीतातु रोहिणीदेवी वी चन्द्रस्त्वं लोक सौख्यदः॥ १८
सीता संज्ञाभवान्सूर्यः सीता रात्रीर्भवान् दिवा।
सीतादेवी महाकाली महा कालो भवान्सदा॥ १६।
स्त्रीलिंगेषु लोकेषु यत्तत्सर्वं हि जानकी।
पुंनाभलाञ्छितं यतु तत्सर्वं हि भवान्विभो॥ २०॥
सर्वत्र सर्वदेवेश सीता सर्वत्र धारिणी।
तदात्वमपि च त्रातुं त्वच्छक्ति विंश्वधारिणी। २१।
तस्मात्कोटि गुण्यं पुण्यं युवाभ्यां परि चिन्हितम्।
चिन्हितं शिव शक्तिभ्यां चरितं तव शान्तिदम्। २२।
आवां राम जगत्पूज्यौ मम पूज्यौ सदा सदा युवाम्।
त्वन्नाम जापिनीगौरी त्वम्मंत्र जपवानहम्। २३।
मुमूर्षोमणिरर्थांतु ह्यद्धोदक निवासिनः।
अहं दिशामि ते मंत्रं तारक ब्रह्म नामकम्॥ २४॥
अत स्त्वं जानकी नाथ परं ब्रह्मासि निश्रितम्।
त्वन्माया मोहिता सर्वे न त्वं जानंति केचन॥ २५॥

* ईश्वर उवाच *

इत्युक्तः शम्भुना रामः प्रसाद प्रवणो ऽभवत्।
दिव्य रूप धरः श्रीमानद्भुताद्भुत दर्शनः॥ २६॥
तं तथा रूप-मालोक्य नर-वानर देवताः।
न दृष्टुमपि शक्तास्ते तेजसामहद्भुतम्॥ २७॥
भयाद्वै त्रिदशाः सर्वे प्रणेमुश्चाति भक्तितः।
भीता विज्ञाय रामो विनर वानर देवताः॥ २८॥
माया मानुषतां प्राप्य स देवानब्रवीत्पुनः।
शृणुध्वं देवता यो मां प्रत्यहं तोष्तते बुधः॥ २६॥

* श्रीरामचन्द्र उवाच *

स्तवेन शंभु प्रोक्तेन देव तुल्यो भवेन्नरः ।
विमुक्तः सर्व पापेभ्यो मत्स्वरूपं मश्नुते ॥ ३० ॥

रणे जयम् वाप्नोति न क्वचित्प्रति हन्यते ।
भूत वेताल कृत्याभिर्ग्रहै श्रापि न बाध्यते ॥ ३१ ॥

अपुत्रो लभते पुत्रं पतिं विन्दति कन्यका ।
दरिद्रः श्रियमाप्नोति सत्ववान् शील वान्भवेन् ॥ ३२।

आत्म तुल्यबलः श्रीमान जायते नात्र संशयः ।
निर्विघ्नः सर्व कार्येषु सर्व यज्ञेषु यत्फलम् ॥ ३३ ॥
तत्फलं कोटि गुणितं स्तवेनानेन लभ्यते ॥

इति श्री पद्मपुराणे शिवकृतं श्रीराम स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

को दण्ड मण्डित कराज्जलदाभवर्णात् ।
सौवर्ण वर्णवसनादरुणाध्वरोष्ठात् ॥
कर्णान्त दीर्घ नयनात्रयनाभि रातात् ।
रामात्परं किमपितत्व महं न जाने ॥

श्रियः श्रियै नमः

श्रीमते हनुमंते नमः

अथ श्रीराम शतनाम स्तोत्रम्

श्रीमते रामानन्दाय नमः

* श्री व्यास उवाच *

शृणु गांगेयवक्ष्यमि रामस्याद्भुतकर्म्मणः ।
नामाष्टकशतं पुण्यं त्रिषुलोकेषु विद्यते ॥ १ ॥
कैलाश शिखरे रम्ये नाना रत्न विचित्रिते ।
एकाग्रः प्रयतो भूत्वा विष्णु माराध्य भक्तितः ॥ २ ॥
उपवृष्टस्ततो भोक्तुं पार्वतीं शंकरोऽब्रवीत् ।
पार्वत्येहि मया सार्धं भोक्तुं भुवन वन्दिते ॥ ३ ॥
तमाह पार्वती देवी जप्त्वा नाम सहस्रकम् ।
ततो भोक्ष्याम्यहं देव भुज्यातां भवता प्रभो ॥ ४ ॥
ततस्तां पार्वतीं प्राह प्रहसन्परमेश्वरः धन्यासि कृत पुण्यासि ।
विष्णु भक्तासि पार्वती दुर्लभा वैष्णवीभक्तिर्भागधेयं विनेश्वरि ५
रकारादीनि नामानि शृण्वतो मम पार्वति ।
मनः प्रसन्न तामेति राम नामाभिशंकया ॥ ६ ॥
रमन्ते योगिनोऽनन्ते सत्यानंदे चिदात्मनि ।
इति राम पदे नासौ परब्रह्माभिधीयते ॥ ७ ॥

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्र नाम भिस्तुल्यं राम नाम वरानने ॥ ८ ॥

रामेत्युक्त्वा महादेवि भुंक्ष्व सार्धं मयाधुना ततो रामेति–
नामोक्त्वा सहभुंजीत पार्वती ततो भुक्त्वा महादेवी पतिना
सहसंस्थिता ॥ ९ ॥

पप्रच्छ श्रीमहादेवं प्रीति प्रवण मानसा ।
सहस्र नामनाभितुल्यं रामनाम त्वयोदितम् ॥ १० ॥
तस्यान्यान्यपि नामानि संति चेद्रावणद्विषः ।
कथ्यतां मम देवेश तत्रमे प्रीतिरुत्तमा ॥ ११ ॥

* श्री शिव उवाच *

लौकिका वैदिकाः शब्दाये के चित्संति पार्वति ।
नामानि रामचन्द्रस्य सहस्रं तेषु चाधिकम् ॥ १२ ॥
तेषु चात्यंत पुण्यंहि नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ।
विष्णोरेकैक नामापि सर्व वेदाधिकंफलम् ।
तादृङ् नाम सहस्रेण राम नाम समंमतम् ॥ १३ ॥
जपतः सर्व वेदांश्च सर्व मंत्रांश्च पार्वति ।
तस्मात्कोटि गुणं पुण्यं राम नाम्नैव लभ्यते ॥ १४ ॥

ॐ अस्य श्रीरामचन्द्रस्याष्टोत्तर शतनाम्नां ईश्वर ऋषिः ।
अनुष्टुप छन्दः श्रीरामचन्द्रो देवता श्रीराम प्रीत्यर्थे जपे
विनियोगः । श्रीरामो रामभद्रश्च रामचन्द्रश्च शाश्वतः ।
राजी वलोचनः श्रीमान राजेन्द्रो रघु पुङ्गवः ॥ १ ॥

जानकी वल्लभो जैत्रो जितामित्रो जनार्दनः ।
विश्वामित्र प्रियो दान्तः शरण त्राण तत्परः ॥ २ ॥
वालि प्रमथनो वाग्मी सत्य वाक् सत्य विक्रमः ।
सत्य व्रतो व्रतफलः सदाहनुमदाश्रयः ॥ ३ ॥
कौसलेयः खरध्वंसी विराध वध पंडितः ।
विभीषण परिभाता दशग्रीव शिरोहरः ॥ ४ ॥
सप्त ताल प्रभेत्ताच हरकोदण्ड खंडनः ।
जामदग्न्य महादर्प दमनस्तार कान्तकः ॥ ५ ॥
वेदान्त सारो वेदात्मा भव वैद्यश्च भेषजम् ।
पूषण त्रिशिरो विश्वः त्रिमूर्ति स्त्रिगुणस्त्रयी ॥ ६ ॥
त्रिविक्रमस्त्रि लोकात्मा पुण्य श्रवण कीर्तनः ।
त्रिलोकि रक्षको धन्वी दण्डकारण्य वासकृत् ॥ ७ ॥
अहल्या पावन श्चैव पितृ भक्तो वरप्रदः ।
जितेन्द्रियो जित क्रोधो जित लोभो जगद्गुरुः ॥ ८॥
ऋक्ष वानर संघाती चित्रकूट समाश्रयः ।
जयंत त्राण वरद- सुमित्रा पुत्र सेवितः ॥ ९ ॥
सर्व देवाधिवश्च मृत वानर जीवनः ।
माया मारी चहंता च महाभोगो महाभुजः ॥ १० ॥
सर्व देवस्तुतः सौम्यो ब्रह्मण्यो मुनि सत्तमः ।
महायोगीश्वरो दारः सुग्रीवेप्सित दायकः ॥ ११ ॥

सर्व पुण्याधिक फल स्तीर्थः सर्वाघ नाशनः ।
आदि पुरुषो महा पुरुषः परमः पुरुषः परः ॥ १२ ॥
पुण्योदयो दयासारः पुराणः पुरुषोत्तमः ।
स्मित वा क्त्रोमित भाषी पूर्व भाषी च राघवः ॥१३॥
अनन्त गुण गम्भीरो धीरोदात्त गुणो भुवः ।
माया मानुष चारित्रो महादेवाभि पूजितः ॥ १४ ॥
सेतु कृज्जित वारीशः सर्व तीर्थ मयो हरिः ।
श्यामांगः सुन्दरः शूरः पीतवा सा धनुर्धरः ॥ १५ ।
सर्व यज्ञा धियपो यज्ञो जरा मरण वर्जितः ।
परमात्मा परंब्रह्म सच्चिदानन्द विग्रहः ॥ १६ ॥
परं ज्योतिः परं धामः पराकाष्टा परात्परः ।
परेश पारगः पारः सर्व वेदात्मकः शिवः ॥ १७ ॥
ॐ तत्सदिति रामस्य नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ।
गुह्याद्गुह्य तरं देवि तवप्रीत्या प्रकाशितम् । १८ ।
यः पठेच्छृणुयाद्वापि भक्तियोगेन केतसा ।
स सर्वै मुच्यते पापैः कल्प कोटि शतोद्भवैः । १९ ।
जलानि स्थलतां यांति शत्रवो यांति मित्रताम् ।
राजानोवश्यतां यांति वन्हयो यांति शैत्यताम् । २० ।
अनुकूलं च भूतानिस्थैर्यं यांति चलाः श्रियः ।
अनुग्रहं ग्रहा यांति शांति मायान्त्युपद्रवा ।२१ ।

पटतो भक्ति भावेन जनस्य गिरि संभवे ।
यः पठेत्परया भक्त्या तस्यवश्यं जगत्रयम । २२ ।
यद्यत्कामयते चिते तत्तदाप्नोति कीर्तनात् ।
य पठेद्रामचन्द्रस्य नाम्नामष्टोत्तरं शतम् । २३ ।
पुराय कालेषु सर्वेषु पठन्नानन्त्यप्नुयात् ।
ज्ञानेनापि च कुर्वाणो नसपापे न लिप्यते । २४ ।
सर्व वेदेषु तीर्थेषु दानेषु च तपः सुच ।
तत्फलं कोटि गुणितं स्तवेना नेन लभ्यते । २५ ।
अन्य कालेषु सर्वेषु पठेन्नाम शताष्टकम् ।
कल्प कोटि सहस्राणि कल्प कोटि शतानि च ।
वैकुंठ वासमाप्नोति दश पूर्वैं दशापरैः । २६ ।
रामं दूर्वादल श्यामं पद्माक्षं पीतवाससम ।
स्तुवंति नामभि दिव्यैर्नते संसारिणो नराः ॥२७ ।
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे ।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः । २८ ।
इमं मंत्रं महादेवि जपन्नेव दिवानिशम् ।
सर्व पाप विनिर्मुक्तो विष्णु सायुज्य माप्नुयात् । २९
इत्येतद्राम भद्रस्य महात्म्यं वेदसंमितम् ।
कथितं तव गांगेय यतस्त्वं वैष्णवोत्तमः । ३० ।

वंन्दा महे महेशानं चण्डको दण्ड खंडनम् ।
जानकी हृदयानन्द चन्दनं रघुनन्दनम् । ३१ ।

इति पद्मपुराणे ईश्वर गौरी संवादे

* श्रीरामचन्द्र स्तोत्रम सम्पूर्ण *

॥ श्रीराम मंत्र महात्म्यम् ॥

श्रीमते रामानन्दाय नमः

* सूत उवाच *

रामतीर्थं समुद्दिश्य वक्ष्यामि मुनि पुङ्गवाः ।
इतिहासं महापुण्यं सर्व पातक नाशनम् । १

सुतीक्ष्ण नामा विप्रेन्द्रो मुनि र्नियत मानसः ।
अगस्त्य शिष्यो रामस्य चरणाब्ज विचिंतकः ॥ २

रामचन्द्र सरस्तीरे तपस्तेपे सुदुष्करम् ।
जपन् षडक्षरं मंत्रं रामचन्द्राधि दैवतम् । ३

नित्यं सपंच साहस्त्रं मंत्र राजमतंद्रितः ।
ज जाप कुर्वन्स्नानं च रघुनाथ सरोजले । ४

भिक्षाशी नियताहारो जित क्रोधो जितेन्द्रियः ।
एवं सुतीक्ष्णो विप्रेन्द्राः बहुकाल मवर्तत । ५

ततः कदाचित्स मुनी रामं ध्यायन्सदाहृदि ।
तुष्टाव सीता सहितं रामचन्द्रं सभक्तिकम् । ६

नमस्ते जानकीनाथ नमस्ते हनुमत्प्रिय ।
नमस्ते कौशिक मुनेर्याग रक्षण दीक्षित । ७

नमस्ते कौसलेयाय विश्वामित्र प्रियाय च ।
नमस्ते हरकोदण्ड भंजकामर सेवित । ८

मारी चान्तक राजेन्द्र ताटका प्राण नाशन ।
कबंधारे हरे तुभ्यं नमो दशरथात्मज । ९

जामदग्न्य जिते तुभ्यं खर विध्वंसिने नमः ।
नमः सुग्रीव नाथय नमो वालि हरायते । १०

विभीषणा भय क्लेश हारिणे मलहारिणे ।
अहल्या दुःख संहर्त्रे नमस्ते भरताग्रज । ११

अम्भोधि गर्व संहर्त्रे तस्मै सेतु कृते नमः ।
तारक ब्रह्मणे तुभ्यं लक्ष्मणा ग्रजते नमः । १२

रक्षः संहारिणे तुभ्यं सर्व रक्षा विधायिने । १३
इतिस्तुवन्मुनिः सोयं सुतीक्ष्णो राम मन्वहम् ।

निनाय कालम निशं रामचन्द्र निषाणाधीः । १४
एवं मभ्य सतस्तस्य राम मन्त्रं षडक्षरम् ।

स्तुवतो रामचन्द्रं च स्तोत्रेणानेन सुव्रताः । १५

तीर्थे च रघुनाथस्य कुर्वतः स्नान मन्वहम् ।
अभवन्निश्चला भाक्ती रत्मचन्द्रेऽति निर्मला । १६

अभूदद्वैत विज्ञानं प्रत्यागात्मैकलक्षणम् ।
अनफीत त्रयी ज्ञानं तथैवा श्रुतवेदनम् । १७

परकाय प्रवेशे च सामर्थ्य मभव द्विजाः ।
आकाश गमने शक्तिः कला वैदग्ध्य मेवच ॥ १८ ॥
अश्रुतानां च शास्त्राणा मभिज्ञानं बिना गुरुम् ।
गमनं सर्व लोकेषु प्रतिघात विवार्जितम् ॥ १९ ॥
अतीद्रियार्थ द्रष्टृत्वं देवैः संभाषणं तथा ।
पिपीलिकादि जंतूनां वार्ता ज्ञानमपि द्विजः ॥ २० ॥
ब्रह्मा विष्णु महादेव लोकेषु गमनं तथा ।
चतुर्दश सु लोकेषु स्वाधीन गमनं तथा ॥ २१ ॥
एतान्यन्यानि सर्वाणि योगिलभ्यानि सत्तमाः ।
सुतीक्ष्णस्या भवन्विप्रा रामतीर्थ निषेवणात् ॥ २२ ॥
एवं प्रभावंतत्तीर्थं महा पातक नाशनम् ।
महा सिद्धिकरं पुण्यमप मृत्यु विनाशनम् ॥ २३ ॥
भुक्ति मुक्ति प्रदं पुंसां नरक क्लेश नाशनम् ।
राम भक्ति प्रदं नित्यं संसारोच्छेद कारणम् ॥ २४ ॥

राम मन्त्रस्य महात्म्यं वक्तुं शेषोपिनक्षमः ।
इतः किमधिकं वक्ष्ये सर्व मन्त्राधिकाधिकः ॥

इति स्कान्दे ब्रह्मोतर खण्डे सेतु महात्म्ये

॥ अष्टादशोऽध्यायः ॥

अथ तारक ब्रह्म महात्म्यम्

हारित संहिता

षडक्षरं दाशरथेस्तारकं ब्रह्म गद्यते ।
सर्वैश्वर्य प्रदं नृणां सर्व काम फल प्रदम ॥
एतमेव परं मन्त्रं ब्रह्म रुद्रादि देवताः ।
ऋषयश्च महात्मानो मुक्ताः जप्त्वा भवाम्बुधौ ॥
एतन्मंत्रमगस्त्यस्तु जप्त्वा रुद्रत्व माप्नुयात् ।
ब्रह्मत्वं काश्यपो जप्त्वा कौशिकस्त्व मरेशताम् ।
कार्तिकेयो मनुत्वं च इन्द्रार्कौगिरि नारदौ ॥
बाल खिल्यादि मनुयो देवता त्वं प्रपेदिरे ।
एषवै सर्व लोकाना मैश्वर्यस्य कारणम् ॥
इममेव जपन्मन्त्रं रुद्रस्त्रि पुर घातकः ।
ब्रह्म हत्या विनिर्मुक्तः पूज्यमानोऽभवत्सुरैः ॥
अद्यापि काश्यां रुद्रस्तु सर्वेषांत्यक्त जीविताम् ।
दिशत्ये तन्महामन्त्रं तारकं ब्रह्म नामकम् ।
तस्य श्रवण मात्रेण सर्व एव दिमंगताः ॥
श्रीरामाय नमो ह्येषस्तारक ब्रह्म नामकः ।
नाम्नां विष्णोः सहस्राणां तुल्य एव महामनुः ॥
अनन्ता भगवन्मंत्रा नानेन तुसमाकृताः ॥

॥ नारद पुराणे १३ अध्यायः ॥

* श्री सनत्कुमार उवाच *

अथ रामस्य मनवो वक्ष्यन्ते सिद्धि दायकाः ।
येषा माराधनान्मर्त्यास्तरंति भवसागरम् ॥
सर्वेषु मन्त्रवर्येषु श्रेष्ठं वैष्णव मुच्यते ।
गाणपत्येषु सौरेषु शाक्त शैवेष्व धीष्ठदम् ॥
वैष्णवेष्वपि मंत्रेषु राम मन्त्रः फलाधिकाः ।
गाणपत्यादि मन्त्रेभ्यः कोटि २ गुणाधिकाः ॥
विष्णु शयास्थितो वन्हि रिन्दु भूषित मस्तकः ।
रामाय हृदयान्तोयं महा घौघ विनाशनः ॥
सर्वेषु राम मन्त्रेषु ह्यति श्रेष्ठः षडक्षरः ।
ब्रह्म हत्या सहस्राणि ज्ञाताज्ञात कृतानि च ॥
स्वर्णस्तेय सुरापान गुरु तल्पायुतानि च ।
कोटि कोटि सहस्राणि ह्युप पापानि यानिवै ॥
मन्त्रस्यो च्चारणात्सद्यो लयं यांति न संशयः ।
एवमगस्त्य संहितायां शिव संहितायां ।
मेकत्सिद्धान्त पोषका अविकल रूपेण इमे ॥
एवश्लोकाः पठिताः संति अतोऽत्र न लिख्यंते ॥

श्री राम

श्री राम नाम महात्म्यम्

॥ श्री मद्रामानन्दाय नमः ॥

ततः सा विश्व जननी पार्वती प्राह शंकरम् ।
इयं ते करगा नित्य मक्ष माला महेश्वर ॥
त्वयाकिं जप्यते देव संदेह यति मे मनः ।
त्वमेकः सर्व भूताना मादिकृत्सकलेश्वरः ॥
श्रमेण त्वं समायुक्तो श्वासोच्छ्वास परायणः ।
जपन्नपि महाभक्तया दृश्य से त्वं मया सदा ॥
त्वत्तः परतरं किंचिद्य त्वं ध्यायसि चेतसा ।
तन्मे कथय देवेश यद्य हृदयिता तव ॥
इति पृष्ट स्तदा शंभुरुवाचहरिसेवकः ।
हरिनामि सहस्राणां सारं ध्यायामि नित्यशः ॥
जपामि राम नामां कमवतारं सुसप्तमम् ।
चतुर्विंशति संख्या कान्त्रा दुर्भावान हरेगुणान् ॥
वेद सारमिदं नित्यं द्वयक्षरं सत त्तोद्यतम् ।
निर्मलं ह्यमृतं शांतं सद्रुपममृतोपमम् ॥
कलातीतं निर्वशगं निर्व्या पारं महत्परम् ।
विश्वाधारं जगन्मध्यं कोटि ब्रह्मांड बीजकम् ॥
जडं शुद्धक्रियं वापि निरंजमं नियामकम् ।
यद्ज्ञात्वा मुच्यते क्षिप्रंघोर संसार बंधनात् ॥

13774
अयोध्या

Vishal pandey

जपतः पाप कोटीनां दावाग्निस्त्वं प्रजायते ।
एतदेव परं गुह्य मेतदेव परं महः ॥
एतद्धि दुर्लभं लोके लोक त्रय विभूषणम् ।
एतदेव परं ज्ञानं द्वचक्षरस्य विचिंतनम् ।
चातुर्मास्ये विशेषेण ब्रह्मादंचिंतित प्रदं ॥
इदं रहस्यं वेदानां पुराणानामनेकशः ।
स्मृती नामपि सर्वोषा द्वचक्षरस्य विचिंतनम् ॥
चिंतना देव मर्त्यानां सिद्धिर्भवति हीप्सिता ।
प्रकृतीनां च सर्वासां न मन्त्रो द्वादशाक्षरः ॥
तासां मन्त्रो राम नाम ध्येयः कोट्याधिको भवेत् ।
रामेतिद्वचक्षर जपः सर्व पापापनोदकः ॥
गच्छंस्तिष्ठ ञ्च्छयानो वा मनुजो रामकीर्तनात् ।
इह निर्वर्त तोयाति प्रान्ते हरि गणो भवेत् ॥
रामेति द्वचक्षरो मन्त्रो मंत्र कोटि शताधिकः ।
सर्वासां प्रकृतीनांच कथितः पाप नाशकः ॥
चातुर्मास्येऽथ संप्राप्ते सोप्यनंत फल प्रदः ।
चातुर्मास्ये महापुण्ये लभ्यते भक्ति तत्परैः ॥
देव वन्निष्फलं तेषां यम लोकस्य सेवनम् ।
न रामादधिकं किंचित्पठनं जगतीतले ॥
राम नामाश्रयायेवै न तेषां यम यातना ।
येच दोषा विघ्न करामृतका विग्रहाश्रये ॥

राम नाम्न लयं यां तिना त्रकार्या विचारणा ।
रमते सर्व भूतेषु स्थावरेषु चरेषु च ॥
अन्तरात्म स्वरूपेण यच्चरामेति कथ्यते ।
रामेति मन्त्र राजोयं भव व्याधि निषूदकः ॥
रणे विजय दश्चापि सर्व कार्यार्थ साधकः ।
सर्व तीर्थ फलः प्रोक्तो विप्राणामपि कामदः ॥
रामचन्द्रेति रामेति रामेति समुदाहृतः ।
द्व्यक्षरो मन्त्र राजोयं सर्व कार्य करो भुवि ॥
देवा अपि प्रगायन्ति राम नाम गुणाकरम् ।
तस्मा त्त्वमपि देवेशि राम नाम सदा जपः ॥
राम नाम जपे द्यौवै मुच्यते सर्व किल्बिषैः ।
सहस्र नाम जंपुण्यं राम नाम्नैव जायते ॥
चातुर्मास्ये विशेषेण तत्पुण्यं दशधोत्तरम् ।
हीन जाति प्रजातानां मह द्दहति पातकम् ॥
तेभ्यश्चानंत नामभ्योधिकं नाम्नां सहस्रकम् ।
तादृङ् नाम सहस्रेण राम नाम समंमतम् ॥
तस्माद्रामेति तन्नाम जप व्याधिनिरंतरम् ॥
राम रामेति रामेति मन्त्र मप्युच्चरंतिते ।
अशनेशयने पाने गमने चोपवेशने ॥
सुखे वप्यथवा दुःखे राम मन्त्र समुच्चरेत् ।
नतस्य दुःख दौर्भाग्यं नाधि व्याधि भयं भवेत् ॥
आयुःश्रियं बलं तस्य वर्द्धयंति दिने दिने ।
रामेति नाम्नामुच्येत पापाद्वै दारुणादपि ॥
नरकं नहि गच्छेत गतिं प्राप्नोति शाश्वतीम् ।